निवेदन

शरत्साहित्यके नौवे भागमे 'षोडशी' नाटक प्रकाशित हो चुका है। उसकी और 'देना-पावना' उपन्यासकी कथावस्तु एक ही है। देना-पावनाका ही नाटकरूप षोड़शी है। फिर भी देना-पावनाको अलगसे प्रकाशित करना आवश्यक प्रतीत हुआ।

शरच्चन्द्र उपन्यासकार थे, नाटककार नहीं। उन्होंने अपने दत्ता, पल्ली-समाज (ग्रामीण समाज) और देना-पावना इन तीन उपन्यासोंको अभिनयके लिए नाटकरूप दिया था। उपन्यास और नाटकके आर्टमे वहुत अन्तर है। नाटक दृश्यकाव्य है। रगमंचपर अभिनीत होनेके लिए ही वह रचा जाता है। दर्शक थोड़े ही समयमे देखकर मुग्ध होना चाहते हैं और बीचमें कहीं ठहरकर अदृश्य घटनाओं या रहस्यकी चिन्ता नहीं करते। इसीलिए नाटकका प्लाट लम्वा और जटिल न होकर सक्षिप्त, स्वल्पपरिसर किन्तु घटना-बहुल होता है। किसी वातको लेकर अधिक समय तक उलझे रहनेका अवकाश भी उसमें नहीं रहता। उसमें प्रधानता रहती है, घटनाओंकी, वर्णनाकी नहीं। उसमे कार्योंके द्वारा और इंगितोंके सहारे भाव प्रकाश किया जाता है, वाक्य-बाहुल्य नहीं होता।

षोड़शीने जीवानन्दके सस्पर्शमे आकर अपने लुप्त नारीत्वका प्रथम आस्वाद पाया, और तब वह भैरवीके कार्यमे मन नहीं लगा सकी। हैमके साथ वातचीत करके, उसकी शान्त निर्मल जीवन-यात्रा देखकर उसे अपने जीवनकी शून्यताका अनुभव हुआ। षोड़शीके जीवनमें जो गंभीर परिवर्तन आया, उसके मूलमें था दो नये सस्पर्शोंका सम्मिलन। उसकी गुप्त चिन्ता, सागरके साथ उसकी वातचीत, फकीरसाहवका व्यग्र प्रश्न और फिर उसका ससकोच उत्तर—इन नाना उपायोंसे नवीन संस्पर्शोंकी क्रिया-प्रतिक्रियाका चित्र उपन्यासमें अकित किया गया है। षोडशीके जीवनके रहस्यपर जिसे वह स्वयं भी अच्छी तरह न जानती थी, उपन्यासकारने जो प्रखर प्रकाश डाला है, वह नाटकमें नहीं है।

जीवानन्दके संस्पर्शमें आकर षोड़शीके मनमें जो प्रलयकारी विप्लव है, उसको केवल नाटक पढ़कर अनुमान नहीं किया जा सकता। समझनेके लिए उपन्यास पढना चाहिए।

देना-पावनामें षोड़शी जीवानन्दका हाथ पकड़कर उसे अपने कुष्ठाश्रमके कार्यके लिए ले जाती है, परन्तु नाटकका अन्त हुआ है जीवानन्दकी मृत्युमें। जीवानन्दने बहुत दिनोंका अभ्यस्त मद्य-पान छोड़ दिया था और दूसरोंके लिए शक्तिसे अधिक श्रम करना शुरू कर दिया था, इससे उसकी मृत्यु एक तरहसे स्वाभाविक है। इससे नायक-नायिकाका चरित्र बहुत स्पष्ट हो गया है। जो बात षोड़शीके मनमें बहुत समयसे संचित थी वह अनिवार्य वेगसे प्रकाशित हो गई है। जीवानन्दने कहा था, मरणको जिस दिन अटका न सकूँगा, चाहता हूँ कि उसी दिन सबके सामने चला जाऊँ। तब जो मृत्यु सहसा आ गई, उसे उसने साहसके साथ वरण किया, अपने आरब्ध कार्यकी अपूर्णतापर न क्षोभ किया, न षोड़शीसे मिलनेका लोभ। उसने सूर्यकी अन्तिम किरणमें अपने अस्त होनेवाले जीवनके अन्तिम रहस्यका परिचय पा लिया।

'देना-पावना' का अनुवाद पाठकोंके सुपरिचित प० रूपनारायणजी पांडेयने और 'नव-विधान' का प्रो० द्विजेन्द्रनाथ मिश्रने किया है।

—प्रकाशक

देना-पावना

१

चण्डीगढ़की चण्डीदेवी बहुत-प्राचीन देवता हैं। किंवदन्ती है कि राजा वीरबाहुके किसी पूर्व-पुरुषने एक युद्ध जीतकर बारुई नदीके तटपर य मन्दिर बनवाया था और परवर्ती कालमें केवल इसी मन्दिरके आसरेसे धीरे-धीरे यह गाँव बस गया था। ऐसा जान पड़ता है, एक समय सचमुच ही यह सारा चण्डीगाँव देवताकी सम्पत्ति था। लेकिन अब तो मंदिरसे लगी हुई कुछ बीघे जमीनके सिवा सब कुछ छीन लिया गया है। गाँव इस समय बीजगाँवकी जमींदारीमें है। किस प्रकार और किस दुर्ज्ञेय रहस्यमय राहसे अनाथ और अक्षमकी सम्पत्ति और वैसे ही निःसहाय देवताका धन अन्तको जमींदारके पेटमें समा गया, यह जानना साधारण पाठकोंके लिए व्यर्थ है। वक्तव्य केवल यही है कि चण्डीगाँवका अधिकाश इस समय चण्डीके हाथसे निकल गया है। शायद देवताका इससे कुछ आता-जाता नहीं; किन्तु देवताके जो सेवायत या पुजारी हैं, उनके मनका क्षोभ आज भी नहीं गया। इसीसे अब भी झगड़े-बखेड़े उठ खड़े होते हैं और बीच-बीचमें वह उग्र रूप धारण करनेका उपक्रम करते हैं। बीजगाँवका जमींदार-वंश चिरकालसे अत्याचारी कहकर बदनाम है। किन्तु लगभग एक वर्ष पहले पुत्रहीन जमींदारकी मृत्यु होनेपर उनके भानजे जीवानन्द चौधरीने जिस दिनसे बादशाही पाई है, उस दिनसे छोटी-बड़ी सारी प्रजाका जीवन एकदम दुर्भर हो उठा है—सबका नाकों दम है। जनश्रुति इस प्रकार है कि भूतपूर्व जमींदार कालीमोहन बाबू तकने इस आदमीकी उच्छृंखलतासे तंग आकर इसे

त्याग करनेका सकल्प कर लिया था, किन्तु आकस्मिक मृत्युने उनकी इच्छाको कार्यरूपमें परिणत नहीं होने दिया।

यही जीवानन्द चौधरी इस समय अपने राज्यको देखने-भालनेके मिससे चण्डीगढ़में आकर उपस्थित हुए हैं। गाँवमें जमींदारकी कचहरीका एक साधारण-सा घर हमेशासे है, किन्तु बाँकुड़ा जिलेके इस असमतल, पहाड़से सटे हुए गाँवका स्वास्थ्यके सम्बन्धमें यथेष्ट सुनाम होनेके कारण, और विशेषत बालुकामय वारुई नदीका पानी अत्यन्त रुचिकर होनेसे जीवानन्दके नाना स्वर्गीय राधामोहन बाबूने नदीके किनारे शान्तिकुंज नामका एक बगला बनवाया था, और वह प्रायः बीच-बीचमें आकर कुछ दिन उसमें रह जाते थे, किन्तु उनके पुत्र कालीमोहनने कभी किसी दिन यहाँ पदार्पण नहीं किया। अतएव जिस बगलेमें किसी समय रूप था, ऐश्वर्य था, मर्यादा थी—जिसके चारों ओरका उद्यान दिन-रात फूलों-फलोंसे भरा रहता था—वही अब और दूसरोंके हाथ पड़कर अयत्न और अवहेलनाके कारण जीर्ण, मलिन और घास-फूस झाड़ झखाड़से भर गया था। न माली था, न रखवाला, न आसपास आबादी, केवल वारुईके शुष्क उपकूलमें यह टूटाफूटा बगला वन-जंगलके बीच खड़ा हुआ निरादृत गौरवकी तरह दिन-रात भाँय-भाँय करता था। कितने दिनोंसे यहाँ किसीने प्रवेश नहीं किया, और कितने दिनोंसे कचहरीका प्रधान कर्मचारी इसके बारेमें सदरमें केवल झूठी कैफियत पेश करता आ रहा है, इसका किसीने हिसाब नहीं रक्खा।

यह जब हालत थी, तभी अकस्मात् एक दिन संध्याके समय केवल दो आदमी साथ लेकर नये जमींदार गाँवकी कचहरीके सामने उपस्थित हो गये। वह पालकीसे नीचे उतरे तक नहीं, केवल गुमाश्ता एककौड़ी नन्दीको बुलाकर कह दिया कि वह कुछ दिन शान्तिकुंजमें रहेंगे। इतना कहकर ही वह गन्तव्य पथपर चल दिये। आशंका और उत्कण्ठासे एककौड़ीका मुख विवर्ण हो गया। शायद वहाँ भीतर घुसनेकी राह ही न हो, शायद सब खिड़कियाँ-दरवाजे चोर उखाड़ ले गये हों, शायद कोठरियों-कमरोंमें झुण्डके झुण्ड बाघ-भालू रहते हों—वहाँ क्या है और क्या नहीं, इसकी कोई जानकारी ही एककौड़ीको नहीं थी।

इस सध्याके समय कहाँ आदमी मिलेंगे, कहाँसे रोशनीका बन्दोबस्त होगा, कहाँ खाने-पीनेका आयोजन होगा—एकाएक अब वह क्या करे, किसकी शरण जाय—यह सोचकर एककौड़ीका सारा शरीर भारी हो गया और सिर चकराने लगा। नौकरी तो गई ही—वह जाय; किन्तु इस नये दुर्दान्त मालिककी जो सब बातें उसने इस बीच लोकपरम्परासे सुन रक्खी हैं, उनमेंसे किसीसे भी उसे कोई राहत नहीं मिली। और यह जो कोई खबर नहीं, इत्तिला नहीं, अचानक शुभागमन हो गया, यह जब कि केवल उसीके लिए हुआ है, तब इसी ज़मींदारीमें रहकर, बाल-बच्चे लेकर कहाँ भागकर अपनी रक्षा करे, इसका कोई कूल-किनारा ही उसे नहीं सूझ पड़ा।

मालिकको उसने कभी देखा नहीं—इसका प्रयोजन ही नहीं हुआ। आज भी वह साहस करके उनके ऊपर नजर नहीं डाल सका। लेकिन उस सँकरी गलीके एक ओर कहारोंके आँखोंसे ओझल होते ही पालकीके छायासे ढके हुए अभ्यन्तरमें जो आकृति उसके मानसिक नेत्रोंके आगे नाच उठी, वह अति भयंकर थी। उसकी अनेक गफलतों और अनेक चोरियोंका अब जो कठोर विचार सरजमीनपर बैठकर चलेगा, उसका कोई अंश और किसीके कंधेपर डालना संभव होगा कि नहीं, यही सोचनेकी जब वह चेष्टा कर रहा था, ठीक उसी समय कचहरीका बड़ा प्यादा दौड़ता हुआ आ पहुँचा। वह बेचारा तगादे-पर गया था, राहमें इस दुर्घटनाकी खबर मिली। उसने हाँफते-हाँफते पूछा—नन्दी महाशय, हुजूर आ रहे हैं न ?

एककौड़ीने उसकी ओर देखकर केवल कहा—हूँ।

विश्वंभर विस्मित होकर क्षणभर एककौड़ीके पाण्डुर मुँहकी ओर ताकता रहा। उसके बाद बोला—हूँ क्या नन्दी, खुद हुजूर जो आ रहे हैं !

एककौड़ी मन ही मन एक तरहसे जानपर खेलनेको तैयार हो गया था, विकृत स्वरमें बोला—आ रहे हैं तो मैं क्या करूँ ? खबर नहीं, इत्तिला नहीं, हुजूर आ रहे हैं। हुजूर हैं तो कुछ सिर तो नहीं काट लेंगे।

सहसा इस आकस्मिक उत्तेजनाका अर्थ समझमें न आनेसे विश्वंभर थोड़ी देर चुप रहा; किन्तु उसका दिमाग जैसे साफ था वैसे ही ठंडा। और प्यादा होनेपर भी गुमास्तेके साथ उसका घनिष्ठ सम्बन्ध था। उसने एककौड़ीको भीतर

ले जाकर थोड़ी ही देरमें शान्त कर दिया और शराबकी बोतल, मास और उसके साथकी और भी एक चीजका गुप्त इशारा करके इतनी बड़ी आशाकी वाणी सुनानेमें भी वह नहीं हिचका कि पुरुषके भाग्यकी सीमाको जब देवता भी नहीं बतला सकते, तब हुजूरकी नजरमें पड़ने पर नन्दीके भाग्यमें भी क्यों एक दिन सदरके नायबका पद नहीं मिलेगा—यह कोई भी जोर देकर नहीं कह सकता!

थोड़ी ही देरमें ही जब एककौड़ी कुछ आदमी, दो लालटेनें और थोड़े बहुत फल मूल सग्रह करके विश्वभरको साथ लिये शान्तिकुजके टूटे फाटकके सामने उपस्थित हुआ, तब सन्ध्याकाल बीत चुका था। उसने देखा, इसी बीच झाड़-झखाड़ डाल-पत्ते तोड़-ताड़कर भीतर जानेके लिए काम-चलाऊ रास्ता बना लिया गया है। तो भी इस वनमय अँधेरे रास्तेमें सहसा घुसनेकी हिम्मत बड़ी देर तक किसीकी नहीं हुई। और भीतर प्रवेश करनेपर पग पगपर उन लोगोंके शरीरमें भयसे रोंगटे खड़े होने लगे।

यह जगल लगभग दस बीघेमें फैला हुआ था, अतएव रास्ता भी कुछ थोड़ा नहीं है और उसे नाँघनेका दुःख भी कम नहीं। कहीं एक दीया भी नहीं जलता, केवल चबूतरेके एक किनारे, जहाँ कहार पालकी रखकर चिलम पी रहे थे, थोड़ी दूरपर एक जलती हुई सूखी लकड़ीके प्रकाशसे थोड़ी सी जगहमें साधारण-सा उजेला हो गया है। खबर पाकर नौकर एककौड़ीको एक कमरेके भीतर ले गया। सारा कमरा शराबकी दुर्गन्धसे भरा हुआ है। एक कोनेमें एक मोमबत्ती टिमटिमा रही है और दूसरे सिरेपर एक टूटे-फूटे तखतके ऊपर बिछौना डालकर बीजगाँवके जमींदार जीवानन्द चौधरी बैठे हैं। रोगी-सा दुबला-पतला और गोरा शरीर है। उम्रका अन्दाज लगाना बहुत कठिन है, क्योंकि उपद्रवों और अत्याचारोंसे मुँह सूखकर एकदम काठकी तरह सख्त हो गया है। सामने सुरासे भरा काँचका गिलास है और उसीके पास विचित्र आकारकी शराबकी एक बोतल, जो लगभग खाली हो चुकी है। तकियेके नीचेसे एक नेपाली खुखरीका कुछ हिस्सा बाहर दिखाई दे रहा है और उसीके निकट एक खुले हुए बक्समें दो पिस्तौलें रक्खी हुई हैं।

एककौड़ी जमीनपर माथा टेककर प्रणाम करनेके बाद हाथ जोड़कर खड़ा

हो गया। मालिकने कहा—तुम्हारा नाम एककौड़ी नन्दी है? तुम्हीं यहाँके गुमाश्ता हो?

खौफसे एककौड़ीका कलेजा धकधक कर रहा था। उसने गर्दन हिलाकर अस्फुट कम्पित कण्ठसे कहा—जी हुजूर!

वह सोचकर आया था कि अब इसके बाद इस बंगलेकी बात उठेगी; लेकिन हुजूरने उसका कोई जिक्र नहीं किया। केवल पूछा—तुम्हारी कचहरीकी तहसील कितनी है?

एककौड़ीने कहा—जी, यही कोई पाँच हजार रुपया।

"पाँच हजार? अच्छी बात है, मैं यहाँ सात-आठ दिन हूँ, मुझे इसी बीचमें दसेक हजार रुपए चाहिए।"

एककौड़ीने कहा—जो हुक्म।

मालिकने कहा—कल सवेरे तुम्हारी कचहरीमें जाकर बैठूँगा—यही कोई दस-ग्यारह बजे—इसके पहले मेरी नींद नहीं खुलती। आसामियोंको खबर कर देना।

एककौड़ीने आनन्दके साथ सिर हिलाकर कहा—जो हुक्म।

कारण, यह बतलानेकी जरूरत नहीं कि एककौड़ीने लगानके अलावा अतिरिक्त रुपए वसूल करनेके भारी बोझसे अपनेको अत्यन्त प्रपीड़ित या संकटमें पड़ा हुआ नहीं समझा। उसने पुलकित होकर कहा—मैं आज रातको ही चारों ओर आदमी भेज दूँगा, जिससे कोई यह न कह सके कि उसे समयपर खबर नहीं मिली।

जीवानन्दने सिर हिलाकर अपनी सम्मति दे दी और मदिराका पात्र मुँहसे लगाकर एक ही साँसमें उसे खाली करके धीरेसे नीचे रखते हुए कहा—एककौड़ी, तुम लोगोंके यहाँ जान पड़ता है, विलायती शराबकी दूकान नहीं है। खैर न सही, मेरे साथ जितनी है, उतनीसे ये कई दिन कट जायँगे—काम चल जायगा। लेकिन मांस मुझे रोज चाहिए।

एककौड़ी तैयार ही था। बोला, यह कौन बड़ी बात है हुजूर, माता चण्डीका सरस महाप्रसाद रोज हुजूरको दे जाऊँगा।

हुजूरने खुश होकर कहा—ठीक है।

इसके बाद बोतलसे थोड़ी-सी मदिरा पात्रमें ढालकर पी और मुँह पोंछते-पोंछते कहा—और भी एक बात है एककौड़ी।

एककौड़ीका साहस बढ़ता जा रहा था। उसने कहा—क्या आज्ञा है हुजूर?

मालिकने मुँहमें दो तीन लौंगें डालकर कहा—देखो एककौड़ी, मैंने ब्याह नहीं किया और जान पड़ता है, करूँगा भी नहीं।

एककौड़ी चुप रहा। तब इस शराबी जमींदारने हँसकर कहा—लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि मैं भीष्म देव हूँ—महाभारत तो तुमने पढ़ा है न?—भीष्मदेव बनकर भी नहीं बैठा हूँ, शुकदेव भी नहीं हो गया हूँ। मेरी बात समझ तो गये एककौड़ी? वह चाहिए।

एककौड़ीने लज्जासे सिर झुका लिया और जरा गर्दन हिलाई, वह मुँह खोलकर जवाब नहीं दे सका। किन्तु जिस निर्लज्ज उक्तिसे जमींदारके गुमाश्ते तकको लज्जा मालूम पड़ती है, वह बात उन्होंने बिना किसी सकोचके मजेसे कह डाली, इसकी कुछ पर्वाह नहीं की। बोले—और सब लोगोंकी तरह नौकरोंसे ये सब बातें कहना मैं पसन्द नहीं करता, उससे ठगाना होता है। अच्छा, अब जाओ। मेरी पालकीके कहारोंके खाने पीनेका इन्तजाम कर देना। वे लोग शायद ताड़ी-वाड़ी भी पीते हैं। उधर भी जरा नजर रखना। अच्छा, जाओ।

एककौड़ी सिर हिलाकर स्वीकृति जताकर और एक बार पृथ्वीपर झुककर लम्बी दण्डवत करनेके बाद बाहर जा रहा था, कि हुजूरने एकाएक उसे पुकारकर प्रश्न किया—इस गाँवमें कोई दुष्ट बदजात रिआया है—तुम जानते हो?

एककौड़ी घूमकर खड़ा हो गया। इसी जगह उसके बहुत दिनोंका एक पुराना घाव था। मालिकके इस प्रश्नने ठीक उसी जगहपर चोट की। किन्तु उस वेदनाको उसने एक सयमके आवरणसे ढककर उत्सुकतारहित कठसे कहा—जी नहीं, ऐसा तो कोई—केवल तारादास चक्रवर्ती है—सो वह हुजूरकी रिआया नहीं है।

' तारादास कौन है?"

एककौड़ीने कहा—गढ़चण्डीका सेवायत।

इन सेवायतोंके साथ जमींदारीके सिलसिलेमें एककौड़ीका अनेक बार

की लड़की है—सर्वनाशिनी कैसे हुई, और डाकू-बदमाशोंका दल ही कहाँसे आकर जुट गया?

एककौड़ीने कहा—इसमें आश्चर्य क्या है हुजूर? यह कहकर उसने भैरवीका जो इतिहास बतलाया, वह सक्षेपमें इस प्रकार है—

भैरवी किसीका नाम नहीं है; गढ़चण्डीकी प्रधान सेविकाकी यह एक साधारण उपाधि है। जैसे वर्त्तमान भैरवीका नाम षोड़शी है, और इनके पहले जो थीं, उनका नाम था मातगिनी भैरवी। माताके आदेशसे उनका सेवायत कभी पुरुष नहीं हो सकता, स्त्रियाँ ही सदासे इस पदकी अधिकारिणी होती आ रही हैं। अदाजन पद्रह-सोलह वर्ष हुए होंगे, एकाएक एक दिन खबर आई कि मातगिनी भैरवीके पतिकी मृत्यु हो गई। बड़ी मुशकिलसे जब यह खबर सत्य प्रमाणित हुई, तब वाध्य होकर मातगिनीको भैरवीका पद छोड़कर काशी चला जाना पड़ा।

जीवानन्द अबतक चुपचाप सुन रहे थे, विस्मित होकर उन्होंने प्रश्न किया—विधवा होनेपर शायद भैरवीगीरी खारिज हो जाती है?

एककौड़ीने कहा—हाँ हुजूर।

जीवानन्दने कहा—जान पड़ता है, इसीसे उन्होंने पतिको अज्ञातवासके लिए भेज दिया था?

एककौड़ीने कहा—इसके सिवा और तो कोई उपाय नहीं है हुजूर। माताके आदेशसे व्याहकी तीन रातोंके बाद पति भैरवीका स्पर्श भी नहीं कर सकता। इसी कारण दूर देशसे दुखी-गरीबका कोई लड़का पकड़ लाकर उससे व्याह करके दूसरे ही दिन रुपया पैसा देकर उसे बिदा कर दिया जाता है और फिर कभी कोई उसकी परछाहीं तक नहीं देख पाता। यही नियम है—यही चिरकालसे होता आ रहा है।

जीवानन्दने हँसकर कहा—कहते क्या हो एककौड़ी, एकदम देश निकाला! भैरवी भी तो मनुष्य है। रातको एकान्तमें एक प्याला शराब ढाल कर देना—गरम मसाला डालकर कुछ महाप्रसाद पकाकर खिलाना—एकदम कुछ भी नहीं कर सकती?

एककौड़ीने सिर हिलाकर कहा—ना हुजूर, माताकी भैरवीको पतिका स्पर्श

न करना चाहिए। लेकिन इससे क्या, गाँवमें पतिके अलावा क्या और कोई पुरुष नहीं है? मातू भैरवीको देखा है और षोड़शी भैरवीको भी। लोग क्या खामखा उसके पैरोंसे लिपटते हैं। बात-बातमें हुजूरके साथ ही मामला-मुकदमा रुजू कर देती है।

जीवानन्दने हँसकर कहा—स्त्री-महंत है और क्या! इसमें कोई दोष नहीं। लेकिन यह तो बताओ, मातूके बाद यह कैसे आ जुटी?

एककौड़ीने कहा—चक्रवर्ती महाशय मातंगिनीके भानजे हैं। ढाका या न जाने कहाँ किसी महाजनकी आढ़तमें खाता लिखनेका काम करते थे। चिट्ठी पाकर चले आये। साथमें एक दसेक वर्षकी लड़की ले आये और फिर कहींसे एक पात्र भी जुटा लिया। उसकी क्या जाति है, किसका लड़का है, कहाँ घर है, कुछ पता नहीं। रातको ही ब्याह हो गया और रातको ही उसे रवाना कर दिया गया। उसके बाद मजेसे गद्दीपर बैठकर राज-भोग कर रहे हैं। कौन कोई बात कहे, कौन कुछ पूछे? गाँवमें भी कोई आदमी नहीं और राजाका भी शासन नहीं!

यह कहकर उसने जमींदारपर ही कटाक्ष किया। किन्तु देखकर समझ लिया कि उसकी यह वक्रोक्ति निष्फल गई। राजा आँखें मूँदे पल-भरमें ही जैसे तन्द्रामें डूब गये। बहुत देर तक कोई बात नहीं हुई। कहीं उसकी जरा-सी भी नासमझीसे जमींदारकी यह तन्द्रा टूट न जाय, इसी डरसे वह कठपुतलीके तरह निश्चल खड़ा खड़ा मन-ही-मन उस शराबीके पुरखोंका श्राद्ध करता रहा। फिर सोचने लगा कि वह चुपचाप खिसक जाय या नहीं। इसी समय जीवानन्द ठीक सहज स्वस्थ मनुष्यकी तरह बोले—लगभग पन्द्रह वर्ष पहलेकी बात है न? अच्छा, यह तारादास क्या देखनेमें खूब ठिंगना और गोरा है?

एककौड़ीने कहा—नहीं हुजूर। चक्रवर्तीका रंग गोरा जरूर है, लेकिन डीलडौल लम्बा है।

जीवानन्दने कहा—लम्बा है? अच्छा, तुमने यह कैसे जाना कि यह आदमी ढाकामें महाजनकी गद्दीमें बही-खातेका काम करता था? ऐसा भी तो हो सकता है कि वह कलकत्तेमें रसोई बनानेका काम करता हो?

एककौड़ीने सिर हिलाकर कहा—नहीं हुजूर, सचमुच ही वह बही-खाता लिखते थे। उनकी छः महीनेकी तनख्वाह बाकी थी। मैंने ही नालिश करनेकी धमकीके साथ चिट्ठी लिखकर रुपए वसूल करा दिये थे।

जीवानन्दने कहा—तो फिर यह सच है। अच्छा, इसी आदमीने क्या पँचेक साल पहले एक आसामीका घर उजाड़नेके मामलेमें मामाके खिलाफ गवाही दी थी?

एककौड़ीने जोरसे सिरको झोंका देकर कहा—हुजूरकी नजरसे कुछ भी नहीं छिपा रहता।—जी हाँ, यह वही तारादास है।

जीवानन्दने धीरे-धीरे सिर हिलाकर कहा—हूँ। उस दफा इसने बहुतसे रुपयोंके फेरमें डाल दिया था। अच्छा, इसके दखलमें कितनी जमीन होगी?

एककौड़ीने मन-ही-मन हिसाब लगाकर कहा—पचास-साठ बीघेसे कम नहीं।

जीवानन्दने घड़ी-भर चुप रहकर कहा—कल तुम खुद जाकर उसे जता आओ कि बीघा पीछे दस रुपया नजराना मुझे चाहिए। मैं यहाँ आठ दिन हूँ।

एककौड़ीने कुण्ठित और संकुचित होकर कहा—जी, वह तो निष्कर (माफी) देवोत्तर सम्पत्ति है हुजूर।

जीवानन्दने कहा—देवोत्तर सम्पत्ति इस गाँवमें जौ-भर नहीं है। सलामी न मिलने पर सब जब्त हो जायगी।

एककौड़ी कुछ उत्तर न देकर चुपचाप खड़ा रहा। चक्रवर्त्ती महाशयके कारण नहीं, उनकी कन्या—जगी सिपाही भैरवी—की बात स्मरण करके। जमींदार तो यहाँसे चले जायँगे, लेकिन उसे तो इसी गाँवमें रहना है। एक बार उसने अस्फुट स्वरमें कहना चाहा—लेकिन हुजूर ..

किन्तु उसका वक्तव्य अधिक आगे नहीं बढ सका। हुजूरने बीचहीमें रोक कर कहा—लेकिन-वेकिन इस समय रहने दो एककौड़ी। मुझे रुपयोंकी जरूरत है। पाँच छः सौ रुपये मैं छोड़ नहीं सकूँगा। ये रुपये उसे देने ही होंगे। कल चक्रवर्त्तीको खबर देना कि वह कचहरीमें हाजिर रहे। दलील-दस्तावेज कुछ हो तो वह भी साथ ला सकता है। रात हुई, अब तुम जा

सकते हो। मेरे आदमियोंके खाने-पीनेका बन्दोबस्त कर देना। सदरमें लौटकर तुम्हारा खयाल रक्खूँगा।

"हुजूर मा-बाप हैं," कहकर एककौड़ी एक बार और लम्बी दण्डवत करके घरसे बाहर हो गया।

२

जमींदार जीवानन्द चौधरीको चण्डीगढ़में पदार्पण किये केवल पाँच दिन हुए हैं। इतनेसे ही समयके अनाचारों और अत्याचारोंसे सारे गाँवमें आग-सी लग गई है—नजरानेके रुपए भी वसूल होते हैं, लेकिन वे किस तरह होते हैं, यह जमींदार-सरकारमें नौकरी न करके समझानेकी चेष्टा करना भी पागलपन है।

तारादास चक्रवर्त्तीने आज्ञाके अनुसार पहले दिन हाजिर होकर नजराना देना नामजूर कर दिया। यहाँ तक कि छः घटे तक तेज धूपमें खड़े रहकर भी स्वीकार नहीं किया। किन्तु सबके सामने कान पकड़कर उठा-बैठी करने, घुड़-दौड़ और मेढकके नाचके प्रस्तावसे फिर वे धैर्यकी रक्षा नहीं कर सके। चण्डी माताके निकट मन-वाणी-कायासे जमींदार-परिवारके वंश-लोपकी प्रार्थना जताकर प्रकटमें पाँच दिनमें रुपए ला देनेका वादा करके छुटकारा पाकर, घर चले आये। आज वही पाँचवाँ दिन है, लेकिन सवेरेसे ही कहीं वह दिखाई नहीं दिये।

इस बीचमें रोज महाप्रसाद जुटाना पड़ा है। और पोखरकी मछलियाँ, बागके फल-मूल, और छप्पर परके लौकी-कुम्हड़े जमींदारके आदमी मनमाने तोड़-ताड़-कर ले गये हैं।—षोड़शीने प्रतिवाद करना चाहा, लेकिन तारादासने किसी तरह एक शब्द भी उसे नहीं कहने दिया। उसका हाथ पकड़कर, रो-धोकर जिस तरह भी हुआ, उसे रोक दिया। पिताके अपमानसे शुरू करके यह सब अत्याचार इतने दिन षोड़शीने किसी तरह सह लिये थे, किन्तु आजकी घटनासे उसका सारा जमा हुआ क्रोध घड़ी-भरमें ही बारूदकी तरह भभक उठा। पिताके चुपचाप अन्तर्धान होनेके कारण उसके अवश्यंभावी फलाफलके भारको उसका एकाकी मन आज जैसे अब और वहन करनेमें असमर्थ हो गया। इसी दशामें जब सारा प्रातःकाल और दोपहर बीतनेके बाद

तीसरा पहर भी ढल चला, तब रातके अँधेरेमें भूखे-प्यासे पिताके आनेकी प्रत्याशा करके वह कुछ खानेके लिए बनाने बैठी थी, उसी समय मन्दिरकी सेविकाने आकर जो अत्याचारका वर्णन किया, वह संक्षेपमें यह है—

शराबी जमींदारको एकाएक यह सनक आ गई है कि अब वह निषिद्ध मांसका और यहाँतक कि वृथा मांसका भी भोजन न करेंगे। साथ ही बकरेका मांस भी यथेष्ट स्वादिष्ट और रुचिकर नहीं होता। इसीसे आज जमींदारके आदमियोंने डोमोंके मोहल्लेसे एक खस्सी लाकर मंदिरमें हाजिर किया और उसका महाप्रसाद कर देनेके लिए कहा। पुरोहितने पहले आपत्ति की, किन्तु अन्तमें जमींदारकी आज्ञा शिरोधार्य करके उसीको उत्सर्ग करके विधि-पूर्वक बलि देकर देवीका महाप्रसाद तैयार कर दिया।

सुनते ही षोड़शीने चूल्हे परसे हाँड़ी उतार कर धमसे नीचे रख दी और क्रोधके मारे कुछ सोचे-विचारे विना ही तेजीके साथ मन्दिरको चल पड़ी। बाहर दरवाजेपर चार-पाँच पछैयाँ उसकी राह रोककर खड़े हो गये। विश्वभर दूरहीसे षोड़शीका घर दिखाकर खिसक गया। ये आदमी जमींदारकी पालकीके कहार थे। उनके मुँहसे ताड़ीकी दुर्गंध आ रही थी, आँखें लाल हो रही थीं। अत्यन्त उच्छृंखल अवस्था थी। उनमेंसे जिस आदमीने बंगला सीख ली थी, उसने बंगलामें ही पूछा—साला ठाकुर घरमें है? साला रुपये नहीं देगा—भागा भागा फिर रहा है!

षोड़शीने इधर-उधर नजर डाली, कहीं कोई नहीं है। कहीं ये उजड्ड मदोन्मत्त पशु एकाएक उसीका अपमान न कर बैठें, इस भयसे दुर्जय क्रोधको प्राणपणसे दबाकर कोमल धीमे स्वरमें कहा,—नहीं, पिताजी घरमें नहीं हैं।

'कहाँ छिप गया है?

"मैं नहीं जानती," कहकर षोड़शीके कतराकर निकल जानेकी चेष्टा करते ही उस आदमीने षोड़शीकी ओर हाथ बढ़ाकर, एक अत्यन्त अश्लील वाक्य उच्चारण करके कहा—वह नहीं है तो तू चल। तुझे ही गर्दनमें गमछा डालकर खींच ले जायँगे।

इस अपमानने षोड़शीको एकदम आपेसे बाहर कर दिया। उसने बड़े जोरसे डाँटकर कहा—खबरदार! चल, मैं ही चलती हूँ। तुम्हारा वह शराबी

मेरा क्या कर सकता है, चलकर देखूँ ! कहकर वह परिणामके भयसे हीन उन्मादिनीकी तरह आप ही तेजीसे आगे बढ गई।

रास्तेमें दो-एक परिचित लोगोंसे साक्षात् हुआ; किन्तु षोडशीने उधर देखा भी नहीं। जमींदारके लोग पीछे शोरगुल करते जा रहे हैं, इसका अर्थ गाँव-वालोंको समझाकर बताना व्यर्थ है—केवल इसी लिए नहीं, बल्कि किसीसे भी सहायताकी भिक्षा माँगकर इतने बड़े अपमानको अपने ही मुँहसे चारों और फैला देनेको भी किसी तरह उसका जी नहीं चाहा—प्रवृत्ति नहीं हुई।

जमींदारकी कचहरी अधिक दूर न थी। एककौड़ी सामने ही खड़ा मिला। देखते ही वह कह उठा—मैं नहीं जानता, मैं कुछ भी नहीं जानता।—सरदारजी, हुजूरके पास ले जाओ। यों कहकर शान्तिकुटीरकी ओर उँगलीसे इशारा करके वह चटपट कचहरीके भीतर घुस गया। इतनी देर बाद षोड़शी अपनी विपत्तिके गुरुत्वकी सम्पूर्ण उपलब्धि करके शंकित हो उठी।

कहाँ जाना होगा—यह समझकर भी उसने पूछा—मुझे कहाँ जाना होगा ? उस आदमीने एककौड़ीकी दिखलाई हुई दिशाकी ओर बताकर कहा—उधर चल।

जाना ही होगा, तो भी षोड़शीने कहा—मेरे पास तो रुपए नहीं हैं सरदार। हुजूरके पास ले जाकर तुम लोगोंको क्या लाभ होगा ?

किन्तु सरदार कहकर जिससे निवेदन किया गया, उसने जैसे उसे सुना ही नहीं। केवल प्रत्युत्तरमें एक बेहूदी चेष्टा करके बोला—चल छोकरी, चल।

षोडशी कुछ नहीं बोली। ये लोग दूसरी जगहसे आये हैं। इन्हें उसकी मर्यादाकी कोई धारणा नहीं है। अतएव रुपयोंके लिए, लगानके लिए मर्द-औरतका कुछ विचार न करके साधारण प्रजाके प्रति जिस आचरणका इन्हें अभ्यास है, वही ये उसके साथ भी करेंगे—उसमें कोई व्यतिक्रम न होगा। अनुनय-विनय निष्फल है; रोने-धोनेसे भी कोई सहायता करने नहीं आवेगा। अबाध्य होनेपर हो सकता है कि ये राहमें ही खींच-खाँच करने लगें—घसीटने लगें। प्रकाश्य सड़कपर अपमानकी इस चूड़ान्त कदर्यताके चित्रने उसका मुँह बाँधकर जैसे सामनेकी ओर ठेल दिया। राहमें चरवाहोंके लड़के गउएँ चराकर लौटे हैं, किसान लोग दिनका काम समाप्त करके बोझ

सिरपर रक्खे चले जा रहे हैं—सभी अवाक् होकर ताकने लगे। षोड़शीने किसीकी ओर दृष्टिपात नहीं किया, किसीसे भी कुछ कहनेकी चेष्टा नहीं की, केवल मन-ही-मन कहने लगी—धरती माता, तुम फट जाओ!

सूर्य अस्त हो गये, अन्धकार आगे बढ़ आया। उसने यन्त्रचालित पुतलीकी तरह चुपचाप शान्तिकुटीरके फाटकके भीतर प्रवेश किया। रुकनेकी, आपत्ति करनेकी कहींपर कुछ भी चेष्टा तक नहीं की।

जिस कमरेमें उसे लाकर हाजिर किया गया, वह वही कमरा था, जिसमें उस दिन प्रवेश करके भयसे एककौड़ीके रोएँ खड़े हो गये थे। आज भी वैसा ही कूड़ा-कचरा पड़ा है, वैसी ही शराबकी दुर्गन्ध आ रही है। सफेद, काली, लम्बी, नाटी अनेक आकार-प्रकारकी खाली बोतलें चारों ओर बिखरी पड़ी हैं। सिरहाने दीवालमें दो चमचमाती भुजाली टँगी हैं। एक कोनेमें एक बदूक दीवालके सहारे खड़ी है। हाथके पास एक टूटी तिपाईके ऊपर एक जोड़ी पिस्तौल रक्खी हैं। कुछ ही दूरपर, ठीक सामनेके बरामदेमें किसी जंगली जानवरका कच्चा चमड़ा छतसे टँगा हुआ है—उसकी विकट दुर्गन्ध बीच-बीचमें आकर नाकमें पहुँचती है। जान पड़ता है, कुछ ही पहले गोलीसे एक सियार मारा गया है। वह उस समय तक फर्शपर ही पड़ा था। उसीके रक्तने बहकर कुछ स्थानको लाल कर दिया है।

ज़मींदार एक शय्यापर चित लेटे हुए कोई पुस्तक पढ़ रहे थे। सिरके पास और एक मोटी जिल्दवाली किताबको शमादान बनाकर उसपर मोमबत्ती जलाई गई है। रोशनीमें पलक मारते ही षोड़शीने अनेक बातें देख लीं। जान पड़ता है, बिछौनेपर चादर न होनेके कारण ही एक कीमती शाल डाल दी गई है। उसका बहुत-सा हिस्सा जमीनपर लोट रहा है। दामी सोनेकी घड़ीके ऊपर एक अधजला चुरुटका टुकड़ा रक्खा है, जिससे उस समय भी सूक्ष्म धुएँकी लकीर घूम-घूमकर ऊपर उठ रही है। खाटके नीचे एक चाँदीके पात्रमें खानेसे बचे हुए हाड़ गोड़ शायद सवेरेसे ही वैसे पड़े हैं। उसीके पास पड़ी है एक जरी किनारीकी ढाकेकी चादर। जान पड़ता है, पासमें हाथ पोंछनेका रूमाल या गमछा न होनेके कारण ही हाथ पोंछकर उसे फेंक दिया गया है।

किताबकी आड़में षोड़शीने चेहरा नहीं देख पाया, लेकिन तो भी ऐसा जान पड़ा कि उसने आईनेकी तरह उसे स्पष्ट देख लिया है। इसके धर्म नहीं, पुण्य नहीं, लज्जा नहीं, संकोच नहीं—यह निर्मम पाषाण है। इसके घड़ी-भरके भी प्रयोजनके आगे किसीका कोई मूल्य नहीं, कोई मर्यादा नहीं। इस पिशाचपुरीके भीतर, इस भयंकर आदमीके हाथमें अपनेको बिलकुल अकेली कल्पना करके क्षण-भरके लिए षोड़शीकी सभी इन्द्रियाँ जैसे अवश अचेतन होने लगीं।

आहट पाकर जमींदारने पूछा—कौन है?

बाहरसे सरदारने सारी घटना संक्षेपमें सुनाकर चक्रवर्तीके लिए एक अकथ्य गालीका उच्चारण करके कहा—हुजूर, उसकी बेटीको पकड़ लाया हूँ।

"किसे? भैरवीको?"

इतना कहकर किताब फेंककर जीवानन्द हड़बड़ाकर उठ बैठा। जान पड़ता है, यह हुक्म उसने नहीं दिया था। किन्तु क्षण-भर बाद ही उसने कहा—ठीक हुआ। अच्छा, तू जा।

आदमियोंके चले जानेपर षोड़शीसे प्रश्न किया—तुम लोगोंको आज रुपया दे देना चाहिए। लाई हो?

षोड़शीका सूखा हुआ कण्ठ रुँध गया, किसी तरह आवाज नहीं निकली।

क्षणभर अपेक्षा करके जीवानन्दने कहा—लाई नहीं, मैं जानता हूँ। लेकिन क्यों नहीं लाई?

अबकी षोड़शीने प्राणपणसे चेष्टा करके धीरेसे जवाब दिया—हमारे पास नहीं है।

जीवानन्दने कहा—न होनेसे रात-भर तुमको पायकोंके कमरेमें बंद रहना होगा। इसका मतलब समझती हो?

दरवाजेकी चौखट जोरसे पकड़कर आँखें मूँदे हुए षोड़शी चुपचाप खड़ी रही। यहाँ कुछ भी असंभव है—यह वह सोच भी न सकी। जान पड़ता है, उसका यह अत्यन्त विवर्ण चेहरा दूरसे भी जीवानन्दको दीख गया और मूर्छासे अपनेको बचानेकी चेष्टा भी शायद उससे छिपी नहीं रही। लगभग मिनटभर वह आप भी कुछ आच्छन्न-सा बैठा रहा। इसके बाद मोमबत्तीकी

रोशनीको एकाएक हाथमें लेकर वह इस मृतकल्प अचेतनप्राय रमणीके एकदम मुँहके पास आकर खड़ा हो गया और आरतीके पहले पुजारी जैसे प्रदीप जलाकर प्रतिमाके मुखको देखता है, ठीक वैसे ही वह महापापिष्ठ स्तब्ध गंभीर मुखसे उस संन्यासिनीकी मुँदी हुई आँखोंकी ओर एकटक ताकता हुआ उसके गेरुए वस्त्र, उसके खुले हुए सूखे केशभार, उसके पीले होठ, उसकी सरल सुस्थ सीधी देह—सब कुछको जैसे दोनों फैले हुए नेत्रोंसे चुपचाप निगलने लगा।

३

नारीका एक तरहका रूप होता है, जिसे जवानीके दूसरे सिरेपर पहुँचे विना पुरुष कभी किसी दिन नहीं देख पाता। वही अदृष्टपूर्व अद्भुत नारीका रूप आज षोड़शीके रूखे बिखरे बालोंमें, उसकी उपवास-कठिन देहमें, उसके निपीड़ित यौवनके रूखेपनमें, उसकी उत्सादित प्रवृत्तिकी शुष्कतामें, शून्यतामें, उसके अंग-अंगमें पहले पहल जीवानंदकी आँखोंके सामने उघड़कर दिखाई दिया।

रमणीकी देहको लेकर जिसकी वीभत्स लीला इन बीस बरसोंसे बराबर अबाध रूपसे चलती आई है, कितनी शोभा, कितनी लज्जा, कितना माधुर्य इस व्यभिचारके बवंडरमें पड़कर अतलमें डूब गया है, उसका कोई दाग तक इस पापिष्ठके मनपर नहीं है। लालसाकी उस अग्नि-जिह्वाको जब अकस्मात् बाधा पहुँची, तब कुछ क्षणोंके लिए इस अपरिचित विस्मयसे उसकी मदोन्मत्त विकृत दृष्टि स्तब्ध, गंभीर और आविष्ट हो रही।

भैरवीको आँचलसे सिर ढकनेका निषेध है, इसीसे वह सिर झुकाये, आँखें मूँदे, मूर्च्छित सी खड़ी रही। जीवानन्दने चुपचाप लौटकर मोमबत्ती यथास्थान रख दी और फिर वह शराबकी बोतलसे कई प्याले, एकके बाद एक, भर-भरकर पीने लगा।

लगभग पन्द्रह मिनटका समय इसी तरह चुपचाप बीत गया। एकाएक वह सीधा होकर बैठ गया। जान पड़ा, उसने अपनी मूर्च्छितप्राय पशु-प्रकृतिको

चाबुक मार-मारकर उत्तेजित कर लिया है। उसने पूछा—तुम्हारा नाम षोड़शी है न ?

इधरसे कोई उत्तर नही मिला।

जीवानन्दने फिर पूछा—तुम्हारी अवस्था कितनी है ?

किन्तु तो भी कुछ उत्तर न पाकर उसका कण्ठस्वर कठिन हो उठा। उसने कहा—चुप रहनेसे कोई फायदा न होगा। जवाब दो।

षोड़शीने बडे कष्टसे धीरेसे कहा—मेरी अवस्था अट्ठाईस वर्षकी है।

जीवानन्दने कहा—ठीक है। जो खबर मिली है, अगर वह सच है तो इन उन्नीस-वीस वर्षोंसे तुम भैरवीगीरी कर रही हो। बहुत संभव है, बहुतसे रुपए तुमने जमा कर लिये हैं। फिर क्यों न दे सकोगी ?

षोड़शीने वैसे ही धीरेसे उत्तर दिया—आपको तो पहले ही बता चुकी हूँ कि मेरे रुपए नहीं हैं।

इस सशंक धीमी आवाजमें भी जो सचाईकी दृढ़ता थी, वह जमींदारके कानोंमें पहुँच गई। उसने इस बातपर और बहस नहीं की। बोला—अच्छा, तो और दस आदमी जो करते हैं, वही करो। जिनके पास रुपए हैं उनके पास जमीन गिरवी रखकर या बेचकर रुपए दे दो।

षोड़शीने कहा—वे लोग यह कर सकते हैं; क्योंकि जमीन उनकी अपनी है। किन्तु देवताकी सम्पत्ति गिरवी रखनेका या बेच डालनेका मुझे तो अधिकार नहीं है।

जीवानन्दने दम-भर चुप रह कर एकाएक हँसकर कहा—मुझे भी लेनेका अधिकार क्या खाक है! एक कौड़ीका भी नहीं। तो भी लेता हूँ; क्योंकि मुझे चाहिए 'यह चाहिए' ही है संसारका सच्चा अधिकार। तुम्हें जब देना चाहिए ही, तब—समझीं ?

षोड़शी चुपचाप स्थिर खड़ी रही, जीवानन्द कहता गया—तुम्हारे भाव-से मालूम होता है, तुम कुछ लिखना-पढ़ना जानती हो। अगर ऐसा है तो जमींदारके पावनेके बारेमें झगड़ा-हंगामा न करो—दे दो।

षोड़शीने अबकी साहस करके सिर उठाकर कहा—इसे क्या आप जमींदारका पावना कहना चाहते हैं !

जीवानन्दने कहा—पावना नहीं कहना चाहता—वह तुम लोगोंका 'देय' है, यही कहना चाहता हूँ। तुम्हें यह खयाल हो सकता है कि पहलेके जमींदार-को तो नहीं देना पड़ा। इसका कारण यह है कि वे मेरी तरह सरल नहीं थे। उन्होंने स्पष्ट करके दावा नहीं किया, लेकिन लगभग सारा गाँव ही धीरे धीरे वेदखल कर लिया। उन्होंने एक तरहसे समझा था, मैंने दूसरी तरहसे समझा। खैर, होगा, यह बताओ कि इतनी रातको क्या तुम अकेले घर जा सकोगी ? जिनके साथ तुम आई थीं, अब उनको साथ नहीं भेजना चाहता।

इतनी देरमें इतनी बातचीतसे षोड़शीको भय भी कुछ कुछ अभ्यस्त होता आ रहा था। उसने विनयके साथ कहा—आपका हुक्म मिलते ही जा सकती हूँ।

जीवानन्दने विस्मयके साथ कहा—अकेले ? इस अँधेरी रातमें ? बड़ा कष्ट होगा जी ! यह कहकर वह हँसने लगा।

उसकी इस बात और हँसीका इशारा इतना स्पष्ट था कि षोड़शीके मनमें जो आशंका कम हो रही थी, वह एकदम चौगुनी बढ़ गई। उसने गर्दन हिलाकर क्षीण स्वरमें उत्तर दिया—ना, मुझे अभी जाना होगा। इतना कहकर उसके पैर बढानेका उद्योग करते ही जीवानन्दने वैसे ही हँसकर कहा,—अच्छा तो रुपए न हों न देना षोड़शी। उसके सिवा और भी अनेक प्रकारकी सुविधा—

किन्तु प्रस्ताव समाप्त नहीं हो पाया। उसके मुँहसे अपना नाम सुनते ही षोड़शी अकस्मात् बड़े जोरसे सिर हिलाकर कह उठी—आपके रुपए, आपकी सुविधा आपकी ही रहे, मुझे जाने दीजिए। इतना कहकर वह सचमुच ही अबकी बार एक पग आगे बढ गई। किन्तु यह आदमी भी जिन आदमियोंको उसके साथ भेजनेका साहस नहीं करता, उन्हींको सामने कुछ दूरपर बैठा हुआ देखकर वह आप ही ठिठककर खड़ी हो गई।

उसके वाक्य और कार्यका कोई प्रतिवाद जमींदारने नहीं किया, किन्तु उसका मुख अँधेरा हो उठा।

क्षण-भर चुप रहकर बोला—तुम मद्यपान करती हो ?

षोड़शीने कहा—नहीं।

जीवानन्दने पूछा—सुना है, तुम्हारे दो-एक अंतरग पुरुष मित्र हैं। यह सच है ?

षोड़शीने वैसे ही सिर हिलाकर कहा—झूठ है।

जीवानन्दने फिर क्षण-भर मौन रहकर प्रश्न किया—तुमसे पहलेकी सभी भैरवियाँ शराब पीती थीं—यह सच है ?

षोड़शीने कहा—सच है।

जीवानन्दने कहा—मातगी भैरवीका चरित्र अच्छा न था—इसके गवाह अब भी मौजूद हैं। यह सच है या झूठ ?

षोड़शीने लज्जित धीमे स्वरमें कहा—सुना तो यही है कि सच है।

जीवानन्दने कहा—सुना है ? अच्छा। तो फिर एकाएक तुम ही भला दलसे अलग, गोत्रसे अलग, ऐसी सच्चरित्र होने क्यों गई ?

इसके जवाबमें षोड़शीने करना चाहा कि अच्छा बननेका अधिकार तो सभीको है; किन्तु सहसा एक अत्यन्त कठोर कण्ठस्वरने बीचहीमें उसे रोक दिया। जमींदार जीवानन्द सीधा होकर उठ बैठा था। उसने कहा—मैं किसी औरतके साथ बहस नहीं करता और उसके मतामतको भी नहीं जानना चाहता। मैं कहता हूँ, चण्डीगढकी पुरानी भैरवियोंकी जिस तरह कटी है, वैसे ही तुम्हारी भी कट जाय, यही यथेष्ट है। आज तुम इसी घरमें रहोगी।

हुक्म सुनकर षोड़शी वज्राहतकी तरह एकदम काठ हो गई। जीवानन्द कहने लगा—तुम्हारे संबन्धमें कैसे इतना बर्दाश्त कर गया, नहीं जानता। अगर और कोई यह बेअदबी करती, तो अबतक उसे मैं पायकोंके कमरेमें भेज देता। बहुतोंको इस तरह भेज भी दिया है।

यह सुनते ही समझा जा सकता है कि यह झूठी या खाली धमकी नहीं है, षोड़शी अकस्मात् रो पड़ी, गलेमें आँचल डालकर, दोनों हाथ जोड़कर, आँसुओंसे रुँधे हुए स्वरमें उसने केवल इतना ही कहा कि मेरा जो कुछ है सब लेकर मुझे छोड़ दीजिए !

जीवानन्द घड़ी-भर चुप रहकर षोड़शीकी ओर ताकता रहा। फिर बोला—क्यों भला, बताओ तो ? इस तरह रोना भी मेरे लिए नया नहीं है, और इस तरहकी भिक्षा भी नई नहीं सुन रहा हूँ। लेकिन उन सबके तो पति-पुत्र थे, उनके रोने और प्रार्थना करनेकी बात तो कुछ कुछ समझ भी सकता हूँ।

उनके पति-पुत्र थे ! सुनकर षोड़शी सिहर उठी।

जीवानन्द कहने लगा—लेकिन तुम्हारे तो वह सब बखेड़ा नहीं है। इधर पन्द्रह-सोलह सालके भीतर अपने पतिको तो तुमने आँखोंसे भी नहीं देखा ! इसके सिवा तुम लोगोंके लिए इसमें कुछ दोष भी नहीं है।

षोड़शी दोनों हाथ जोड़े ही खड़ी थी। उसने आँसुओंसे रुँधे कण्ठसे कहा—यह सच है कि मुझे अच्छी तरह उनकी याद नहीं है—लेकिन वह हैं तो सही ! मैं सच कहती हूँ आपसे कि मैंने आज तक कोई भी अन्याय नहीं किया। दया करके मुझे छोड़ दीजिए।

जीवानन्दने पुकारा—महावीर !

षोड़शीने आतङ्कसे काँपकर कहा—आप मुझे मार डाल सकते हैं, लेकिन—

जीवानन्दने कहा—अच्छा यह बहादुरी उन लोगोंकी कोठरीमें जाकर दिखाना। महावीर !—

षोड़शी धरतीमें लोटकर रोती हुई बोली—किसीकी ताकत नहीं है जो मुझे मेरे प्राण रहते ले जा सके। मेरी जो कुछ दुर्दशा हो, मुझपर जितना भी अत्याचार होना हो, वह आपके सामने ही हो।—आप आज भी ब्राह्मण हैं, आप आज भी भद्रपुरुष हैं।

किन्तु इतने बड़े अभियोगपर भी जीवानन्द हँस दिया। वह हँसी जैसी कठिन थी, वैसी ही निष्ठुर। उसने कहा—तुम्हारी बातें सुननेमें बुरी नहीं हैं; लेकिन किसीके रोनेसे मुझे दया नहीं आती। यह मैंने अनेक बार सुना है। औरतोंके ऊपर मुझे जरा भी लोभ नहीं है—अच्छी न लगते ही नौकरोंको दे देता हूँ। तुम्हें भी दे देता, जान पड़ता है, सिर्फ यही आज पहले पहल थोड़ा-सा मोह पैदा हो गया है। ठीक नहीं जान पा रहा हूँ, नशा उतरे विना ठीक ठहरा भी नहीं पाऊँगा।

महावीरने दरवाजेके पास पहुँचकर कहा—हुजूर!

जीवानन्दने सामनेके किवाड़ोंकी ओर उँगलीसे इशारा करके कहा—इसे आज रात-भरके लिए उस कोठरीमें बंद कर दे। कल फिर देखा जायगा।

षोड़शीने आँखोंसे आँसू बहाते हुए कहा—मेरे सर्वनाशकी बात तो जरा सोच कर देखिए हुजूर! कल मैं फिर किसीको मुँह नहीं दिखा सकूँगी।

जीवानन्दने कहा—बस दो-एक दिन। उसके बाद दिखा सकोगी। मेरा यह लीवरका दर्द आज बहुत बढ गया है—और अधिक मत खिझाओ, जाओ।

महावीरने धमकाते हुए कहा—अरे उठ न छोकरी—चल।

लेकिन उसकी बात पूरी होते-न-होते अकस्मात् दोनों ही चौंक उठे। जीवानन्दने जोरसे धमकी देकर कहा—खबरदार सुअरके बच्चे! जबान सँभालकर बोल। फिर अगर कभी मेरे हुक्मके बिना किसी औरतको पकड़ लाया तो तुझे गोली मार दूँगा।—कहते-कहते ही वह सिरके नीचेकी तकिया जल्दीसे खींचकर पेटके नीचे दबाकर मुँहके बल पट पड़ गया और यातनासे अस्फुट आर्त्तनाद करके बोला—आज-भर तुम उस कोठरीमें बद रहो; कल तुम्हारे सतीपनका फैसला होगा।—ए! मेरे सामनेसे हटा ले जा न—

महावीरने धीरेसे कहा—चलिए।

षोड़शी चुपचाप उठकर खड़ी हो गई और जीवानन्दके निर्देशके माफिक पासकी अँधेरी कोठरीमें जाने लगी। एकाएक उसका नाम लेकर जीवानन्दने पुकारा और कहा—जरा खड़ी रहो—तुम पढ़ना जानती हो, क्यों?

षोड़शीने धीरेसे कहा– जानती हूँ।

जीवानन्दने कहा—तो थोड़ा-सा काम किये जाओ। वह जो बाक्स रक्खा है—उसके भीतर और एक छोटा-सा कागजका बक्स तुमको मिलेगा। उसमें कई छोटी-बड़ी शीशियाँ हैं। जिसपर बँगलामें 'मरफिया' लिखा है, उसमेंसे जरा-सी नींदकी दवा दे दो। लेकिन खूब सावधान, वह भयानक विष है।—महावीर, रोशनी दिखा।

लालटेनकी रोशनीमें षोड़शीने काँपते हुए हाथसे बक्सको खोला, और शीशी निकालकर डरते हुए पूछा—कितनी देनी होगी?

जीवानन्दने तीव्र वेदनासे एक अव्यक्त ध्वनि करके कहा—अभी बतलाया तो, बहुत जरा सी। मै उठ नहीं पा रहा हूँ और मेरे हाथका भी ठीक नहीं है, आँखोंका भी ठीक नहीं। उसीमे एक काँचकी सीप है, उसकी आधेसे भी कम मात्रा चाहिए। तनिक भी बेशी हो गई तो फिर इस नींदको तुम्हारी चडी देवीके बाबा भी आकर दूर न कर सकेंगे।

षोड़शीने ढूँढकर वह सीप निकाली, मात्रा ठीक करनेमें उसका हाथ काँपने लगा। उसके बाद बड़े यत्नसे, बड़ी सावधानीसे जब वह निर्देशके माफिक मात्रामें दवा लेकर पास आकर खड़ी हुई, तब बिना विचारे वह विष जीवानन्दने हाथ बढाकर ले लिया और मुँहमें डाल लिया। न कोई प्रश्न किया, न मात्राकी जाँच की, एक बार आँखें खोलकर उसे देखा भी नहीं।

४

पासकी अँधेरी कोठरीके भीतर रखकर बाहरसे दरवाजा बदकर महावीर चला गया, लेकिन भीतरसे बद करनेका कोई उपाय न रहनेके कारण षोड़शी उसी चद दरवाजेसे पीठ लगाकर बहुत सतर्क होकर बैठ गई। उसका शरीर और मन थकान और अवसादकी अतिम सीमापर आकर पहुँच गये थे, और यद्यपि रातमें और किसी विपत्तिकी सभावना नहीं थी, लेकिन फिर भी निश्चिन्त होकर सोया भी तो किसी तरह नहीं जा सकता। यहाँ रत्ती-भर भी शिथिलताके लिए स्थान नहीं है—यहाँ अत्यन्त असंभवके विरुद्ध भी उसे सब तरहसे सजग रहना होगा।

लेकिन बाकी रात चाहे जिस तरह कटे, कल उसके सतीत्वकी अत्यंत कठोर परीक्षा होगी—यह बात उसने अपने कानोंसे सुनी है और उससे बचनेका क्या उपाय है, यह भी उसे बिलकुल नहीं मालूम।

अपने पिताकी बात याद करके षोड़शीको कुछ भरोसा तो क्या होता, वह लज्जासे मर गई। पिताको वह अच्छी तरह पहचानती थी—वह जैसे डरपोक हैं वैसे ही नीचाशय। बहुत रात बीते घर लौटकर इस दुर्घटनाको जान-सुनकर भी शायद वह प्रकट न करेंगे, बल्कि सामाजिक गोलमालके भयसे इसे दबा

देनेकी ही चेष्टा करेंगे। मन ही मन यह कहकर तर्क करेंगे कि जमींदार तो षोड़शीको एक न एक दिन छोड़ ही देगा; लेकिन इस घटनाके लिए आन्दोलन करके देव-सम्पत्तिसे ही अगर वंचित होना पड़े तो लाभकी अपेक्षा नुकसानका अंक बहुत अधिक भारी हो उठेगा। ऊपरसे नजरानेके रुपयोंके सम्बन्धमें भी पिताकी तेज नजर बहुत दूर आगे बढ़ जायगी, यह भी षोड़शी बिल्कुल स्पष्ट देखने लगी। इसके अलावा इस दुर्दान्त जमींदारके खिलाफ वह करेंगे भी क्या! छः सात कोसके भीतर कोई थाना-चौकी नहीं है—पुलीसमें खबर देनेके लिए भी जितना समय, धन और लोक-बल चाहिए, उसमेंसे कुछ भी तारादासके पास नहीं है। अतएव अत्याचार चाहे जितना बड़ा क्यों न हो, इस बहुत बड़ी शक्तिके आगे सिर झुकाकर उसे सह लेनेके सिवा और कोई गति नहीं है—यह बात आँखोंमें उँगली डालकर जैसे कोई बारबार षोड़शीको दिखा देने लगा।

अथ च सारी दुश्चिन्ताके साथ मिलकर उसके मनमें एक और चिन्ताकी धारा चुपचाप धीरे-धीरे हरघड़ी बह रही थी—वह थी उसकी चण्डी माताके संबंधमें, जिसे वह बचपनसे ही मन और कायासे पूजती आ रही है। किन्तु यह जो आदमी उस कमरेमें सो रहा है—जिसके गाढे और भारी निःश्वासका शब्द अस्पष्ट होकर उसके कानोंमें पहुँच रहा है, उसकी धर्म और अधर्म, भले और बुरे, अपने और पराये—संसारकी सभी वस्तुओंके प्रति कैसी गहरी और निर्मम अवहेला है! नारीकी आँखोंके आँसुओंपर जिसे करुणा नहीं; रमणीके रूप और यौवनके प्रति जिसे ममता नहीं, आकर्षण नहीं, पति-पुत्रवती स्त्रियोंके सतीधर्मकी नितान्त निरर्थक हत्या करनेसे जो रुकता नहीं; उनके हृदयके रक्तमें दोनों पैर भर जाने पर भी जो उधर भ्रूक्षेप भी नहीं करता; जो अपने प्राणों तकको अभी उसके हाथमें सौंपकर उसके दिये हुए विषको बिना संकोचके आँख मूँदकर पी गया, तनिक भी दुविधा नहीं की, इस अश्रद्धा और अनासक्तिके अपरिमेय पत्थरके भारको ठेलकर क्या माता चण्डी भी उसकी रक्षाकी राह निकाल सकेंगी?

इस तरह उसने जिधर नजर दौड़ाई, उधर ही उसे घोर अन्धकारके सिवा तनिक-सी भी प्रकाशकी किरण नहीं देख पड़ी। तब उसका परिपूर्ण निराश्वास

उसी एकमात्र देवताके मंदिरके आसपास घूम-फिरकर केवल कल्पनाका जाल बुनने लगा।

जब सवेरा होनेको हुआ, तब जान पड़ता है, वह कुछ तन्द्रासे अभिभूत हो पड़ी थी। एकाएक पीठके ऊपर एक दबावका अनुभव करके हड़बड़ाकर सीधी होकर बैठ गई। देखा, खिड़कीसे सूर्यका प्रकाश कोठरीके भीतर पहुँच रहा है।

बाहरसे जो दरवाजा ठेल रहा था, उसने कहा—आप निकल आइए, मैं हूँ एककौड़ी।

षोड़शी शरीरके वस्त्रको ठीक करके उठ खड़ी हुई। दरवाजा खोलते ही सामने देखा कि गत रात्रिकी उसी शय्याके ऊपर जीवानन्द प्रायः वैसे ही तकियेका सहारा लिये बैठा है। कल दीपकके स्वल्प प्रकाशमें उसका मुँह षोड़शीने अच्छी तरह नहीं देख पाया था; किन्तु आज दमभरके ही दृष्टिपातमें उसने देख पाया कि बहुत लवे समयके अत्याचारने उसकी देहके हर एक अंगपर कितनी गहरी चोटें की हैं। अवस्थाका ठीक अनुमान नहीं होता—शायद चालीस बरसकी है, शायद और भी अधिक हो। कपालके दोनों ओरके कुछ बाल सफेद हो गये हैं, चौड़ा मस्तक रेखाओंसे भरा है, उसके ऊपर काली-काली छाप पड़ी है। दृष्टि क्षय-रोगीकी आँखोंकी-सी अस्वाभाविक तीक्ष्ण है और उसीके नीचे पतली नाक जैसे खाँड़ेकी तरह झूल पड़ी है। सारा मुखमण्डल अत्यन्त मुरझाया हुआ है। उसीके साथ मिलकर भीतर भी जैसे किसी अव्यक्त वेदनाने स्याही पोत दी है।

जीवानन्दने हाथ हिलाकर अस्फुट कण्ठसे कहा,—तुम्हें डर नहीं है, पास आओ।

षोड़शी धीरेसे कई पग आगे बढ़कर आँखें नीची किये चुप-चाप खड़ी हो गई। जीवानन्दने कहा—पुलीसके आदमियोंने घर घेर लिया है। मजिस्ट्रेट साहब फाटकके भीतर घुस चुके हैं, बस आते ही होंगे।

षोड़शी मन ही मन चौंक उठी, लेकिन कुछ बोली नहीं। जीवानन्द कहने लगा—जिलेके मजिस्ट्रेट दौरेपर निकलकर यहाँसे लगभग एक कोस दूरपर

तंबू डाले हुए थे। तुम्हारे बापने कल रातको उनके पास जाकर सब हाल कह दिया है। केवल इससे ही इतना न होता; असलमें के० साहब खुद ही मुझपर बहुत नाराज है। गत वर्ष दो दफे फँसानेकी उसने चेष्टा की थी; लेकिन सफल नहीं हो पाया। आज एकदम रँगे हाथों पकड़ लिया है—इतना कहकर जीवानन्द जरा हँसा।

एककौड़ी मुँह लटकाये पास खड़ा था। बोला—हुजूर, अबकी जान पड़ता है, हम लोग भी नहीं बचेंगे।

जीवानन्दने गर्दन हिलाकर कहा—संभव है। फिर षोड़शीसे कहा—बदला लेना चाहो तो यही ठीक मौका है। मुझे जेल भी भिजवा सकती हो।

षोड़शीने इसका जवाब देनेके लिए मुँह उठाते ही देखा, जीवानन्द उसके मुँहकी ओर एकटक ताक रहा है। आँखें नीची करके षोड़शीने धीरेसे पूछा—इसमें जेल क्यों होगी?

जीवानन्दने कहा—कानून है। इसके सिवा के० साहबके हाथमें पड़ा हूँ। जब मैं बादुड़-बागान (कलकत्ता) के मेसमें रहता था, तब इसीके द्वारा एक बार बीस दिन हवालातमें भी रह चुका हूँ। इसने किसी तरह जमानत नहीं मंजूर की—और तब जामिन ही कौन होता!

षोड़शीने सहसा उत्सुक कण्ठसे प्रश्न कर डाला—आप क्या कभी बादुड़-बागानके मेसमें थे?

जीवानन्दने कहा—हाँ। उस समय एक प्रणय-काण्डमें पकड़ा गया था—साले अयान घोषने किसी तरह नहीं छोड़ा—पुलीसमें दे दिया। जाने दो, वह किस्सा बहुत बड़ा है। के० साहब मुझे भूला नहीं है, खूब पहचानता है। आज भी मैं भाग जा सकता था, किन्तु व्यथाके कारण शय्यागत हो रहा हूँ—हिल नहीं सकता।

षोड़शीने धीरेसे पूछा—आपकी वह कलकी व्यथा क्या दूर नहीं हुई?

जीवानन्दने कहा—नहीं, बल्कि बहुत बढ़ गई है। इसके सिवा यह अच्छी होनेवाली भी नहीं है।

षोड़शीने जरा चुप रहकर कहा—मुझे क्या कहना होगा?

जीवानन्दने कहा—सिर्फ यह कहना होगा कि तुम अपनी इच्छासे आई हो और अपनी इच्छासे ही यहाँ हो। इसके बदलेमें मैं तुम्हारी सब देवोत्तर सम्पत्ति छोड़ दूँगा, हजार रुपए नगद दूँगा, और नजरानेकी तो कोई बात ही नहीं।

एककौड़ी शायद इन्हीं बातोंकी प्रतिध्वनि करने जा रहा था, किन्तु षोड़शीके मुँहकी ओर देखकर सहसा थम गया। षोड़शीने सीधे जीवानन्दके मुँहकी ओर ताककर कहा—यह मेरे स्वीकार करनेका अर्थ आप समझते हैं? उसके बाद भी मुझे जमीन और रुपए-पैसोंसे मतलब रह सकता है, यही क्या आप विश्वास करते हैं?

जीवानन्दका चेहरा पहले फीका पड़ गया और उसी पीले-उतरे चेहरेकी तीक्ष्ण तीव्र दोनों आँखोंमें कहाँसे उसकी गत रात्रिकी वैसी ही मुग्ध दृष्टि धीरे धीरे लौट आकर स्थिर हो रही। बहुत देर तक उसने एक शब्द भी नहीं कहा। उसके बाद धीरेसे सिर हिलाकर कहा—यही बात है षोड़शी, यही बात है! जीवनमें आज तक तुमने कोई पाप नहीं किया—सचमुच तुम यह न कर सकोगी।

फिर जरा हँसकर कहा—यह जैसे मैं भूल ही गया हूँ कि रुपए-पैसोंके बदले मान-सम्भ्रम नहीं बेचा जाता। अच्छा, वही हो—जो सच बात है, वही तुम कह देना। जमींदारकी तरफसे अब और कोई उपद्रव तुमपर न होगा।

एककौड़ी व्याकुल होकर फिर कुछ कहने ही वाला था कि बाहरके बंद दरवाजेपर बार बार धक्के पड़नेका शब्द होने लगा, जिससे अबकी भी वह अपनी बात न कह पाया, उसका चेहरा बिल्कुल सफेद पड़ गया।

जीवानन्दने कहा—खुला हुआ है, भीतर आइए। फौरन ही खुले हुए द्वारके सामने देखा गया, छोटे-बड़े कई पुलीस-कर्मचारियोंके साथ स्वयं जिला-मजिस्ट्रेट साहब खड़े हैं, और उनके कंधोंके ऊपर मुँह बढ़ाये तारादास चक्रवर्ती झाँक रहा है। तारादासने भीतर घुसते ही रोकर कहना शुरू कर दिया—धर्मावतार, हुजूर! यही मेरी लड़की, माता चण्डीकी भैरवी है। आपकी दया न होती, तो आज रुपयोंके लिए इसका खून कर डाला जाता धर्मावतार!

के० साहबने षोड़शीको सिरसे पैर तक बार-बार निहार कर साफ बंगलामें पूछा—तुम्हारा नाम षोड़शी है? तुमको ही इन्होंने घरसे पकड़ मँगाकर यहाँ बंद कर रक्खा है?

षोड़शीने सिर हिलाकर कहा—जी नहीं, मैं अपनी इच्छासे आई हूँ—किसीने मेरी देहपर हाथ नहीं लगाया।

चक्रवर्त्ती चिल्ला उठा—नहीं हुजूर, बिल्कुल झूठ—एकदम मिथ्या। सारा गाँव गवाह है। मेरी बेटी रोटी बना रही थी। आठ पायक जाकर मेरी बेटीको घरसे मारते-मारते खींच लाये हैं।

मजिस्ट्रेटने जीवानन्दकी ओर वक्रदृष्टि डालकर षोड़शीसे फिर कहा—तुम्हें कोई भय नहीं है, तुम सच बात कहो। तुमको घरसे पकड़ लाये हैं?

"जी नहीं, मैं आप ही आई हूँ।"

"यहाँ तुम्हारा क्या प्रयोजन था?"

षोड़शीने केवल इतना ही कहा—काम था।

साहबने जरा हँसकर पूछा—सारी रात काम था?

षोड़शीने वैसे ही सिर हिलाकर शान्त और धीमे स्वरमें कहा—हाँ, सारी रात मेरा काम था। इनकी तबीयत खराब हो गई थी, इसीसे घर लौटकर नहीं जा सकी।

तारादासने चिल्लाकर कहा—विश्वास न कीजिएगा हुजूर, सब झूठ है, सब बनाई हुई बात है। आदिसे अन्ततक सिखाई हुई बात है।

साहब इसपर ध्यान न देकर केवल होंठ दबाकर जरा हँसे और मुँहसे सीटी बजाते हुए पहले बदूककी, उसके बाद दोनों रिवाल्वरोंकी अच्छी तरह जाँच करके जीवानन्दसे केवल इतना ही बोले—आशा करता हूँ, इन चीजोंको रखनेका आपने हुक्म हासिल कर रक्खा है। इसके बाद वे धीरे-धीरे कमरेके बाहर हो गये।

बाहर उनकी आवाज सुनाई दी—हमारा घोड़ा लाओ। क्षणभर बाद ही घोड़ेकी टापें बजनेसे समझा गया कि जिला-मजिस्ट्रेट चले गये।

५

मजिस्ट्रेट साहबके घोड़ेकी टापोंका शब्द क्रमशः क्षीण होता गया। तब अन्य पुलीस-कर्मचारियोंने भी अपने अनुचरोंको वहाँसे चल देनेका इशारा किया। अब तारादासको अपनी अवस्थाका ज्ञान हुआ। अभीतक वह जैसे एक घने कुहासेके बीच मोहाच्छन्न-सा खड़ा था, एकाएक दोपहरके सूर्यकी तीक्ष्ण किरणोंसे उसकी भाप तक उड़ गई और दुःखका आकाश एकदम दूर दिगन्त तक धाँय धाँय करने लगा। जहाँतक नजर जाती है, कहीं छाया, कहीं आश्रय, कहीं छिपनेके लिए स्थान नहीं है—केवल वह और उसकी मौत आमने-सामने खड़े होकर दाँत निकालकर हँस रही है।

सारे जिलेके जो भाग्यविधाता हैं, उनके अनुग्रह और अनुकम्पाको बिल्कुल ही अप्रत्याशित और अशातीत सुलभभावसे प्राप्त करके उसकी कल्पना दिग्विदिक्-ज्ञानसे शून्य हो उठी थी। उसने सोचा था कि यह केवल उस अत्याचारी शराबीको हाथोंहाथ पकड़ा देना ही नहीं है, यह उसकी भाग्य-लक्ष्मीका बेशुमार दान है। उनके वरद हाथकी दसों उँगलियोंकी फाँकोंसे आज जो वस्तु झर पड़ेगी, वह केवल उस जमींदारके परिवारका सर्वनाश ही नहीं है, यह उसकी जमीन-जमा और रुपए-मोहरोंका ढेर होगा। उसे एक यही आशंका थी कि कहीं ऐसा न हो कि ये लोग समयपर न पहुँच सकें, कहीं कोई पहले ही खबर देकर जमींदारको सतर्क न कर दे। और इस तरफ उसकी चिन्ता, परिश्रम और उद्यमकी सीमा न थी। यह बात नहीं है कि उसने इसकी विफलताके दण्डके बारेमें भी न सोचा हो, लेकिन वह निष्फलता जब इस तरफसे पहुँची, स्वयं षोड़शीके हाथकी चोटसे ही जब उसकी कामनाका इतना बड़ा पत्थरका पक्का पोढा महल नींवसमेत धूलमें मिल गया, तब पहले तो तारादास मूढकी तरह खूब चीखा-चिल्लाया, उसके बाद जिसका ज्ञान लुप्त हो गया हो उस आदमीकी तरह कुछ देर स्तब्ध अभिभूत भावसे खड़ा रहा। फिर एकाएक छाती फाड़कर निकली हुई जोरकी रुलाईसे सब उपस्थित लोगोंको चौंकाकर एक पुलीस-कर्मचारीके पैरोंके नीचे गिरकर रोता हुआ बोला—बाबू साहब,

मेरी क्या गति होगी! मुझे तो अब जमींदारके लोग जीता ही जमीनमें खोदकर गाड़ देंगे।

इन्स्पेक्टर बाबू प्रौढ़ अवस्थाके भले आदमी थे। उन्होंने हड़बड़ाकर चेष्टा करके जल्दीसे तारादासको उठाया और आश्वासन देते हुए सदय कण्ठसे कहा—भय क्या है ब्राह्मण देवता, तुम जैसे थे वैसे ही जाकर रहो। खुद मजिस्ट्रेट साहब तुम्हारे सहायक हैं, अब तुमपर कोई अत्याचार नहीं कर सकेगा।

यों कहकर उन्होंने एक बार जीवानन्दकी ओर कनखियोंसे देखा। तारादासने आँखें पोंछते-पोंछते कहा—साहब नाराज होकर जो चले गये बाबूजी!

इन्स्पेक्टर बाबूने जरा मुसकाते हुए कहा—नहीं महाराज, नाराज होकर नहीं गये हैं। हाँ, जान पड़ता है, आजके इस मजाकको वह सहजमें नहीं भूल सकेंगे। इसके सिवा हम लोग भी कुछ मर नहीं गये हैं और पुलीस-थाना भी चाहे जैसा हो, एक मौजूद है। इतना कहकर, उन्होंने और एक बार जमींदारकी खाटकी ओर कनखियोंसे देख लिया। उनके इस इशारेका मतलब चाहे जो हो, जमींदारकी तरफसे किसी तरहका कोई जवाब नहीं प्राप्त हुआ। घड़ी-भर चुप रहकर वह कह उठे—अब चलो देवता, चला जाय। जाना भी तो दूर है।

सब इन्स्पेक्टर बाबूकी अवस्था कम थी। उन्होंने जरा हँसकर कहा—तो क्या देवता अकेले ही जायँगे!

इस बातपर सभी हँस दिये। जो दो चौकीदार दरवाजेके पास खड़े थे, उन्होंने भी हँसकर मुँह फेर लिया। यहाँ तक कि एककौड़ी तक मुँह लाल करके कोठरीकी धन्नियोंकी ओर ताकने लगा।

इस अश्लील इशारेसे तारादासकी आँखोंके आँसू पल-भरमें ही आगकी चिनगारियोंके रूपमें बदल गये और वह षोड़शीकी ओर कठोर दृष्टि डालकर गरज उठा—जाना होगा तो अकेला ही जाऊँगा। आप लोगोंने क्या यह सोचा है कि मैं अब फिर उसका मुँह देखूँगा, फिर उसे घरमें घुसने दूँगा? इन्स्पेक्टर बाबूने हँसकर कहा—मुँह नहीं देखना चाहते तो इसके लिए कोई तुम्हें सिरकी कसम न धरावेगा। लेकिन घर जिसका है, उसे घरमें घुसने न

देकर कहीं नये बखेड़ेमें न फँस जाना। तारादासने तमककर कहा—घर किसका है? घर मेरा है। मैंने ही भैरवी बनाया है, मैं ही उसे निकाल बाहर करूँगा। कल-कुंजी तो सब इस तारा चक्रवर्तीके हाथमें है। इतना कहकर उसने जोरसे अपनी छाती ठोककर कहा—नहीं तो जानते हैं आप, वह कौन है? सुनेंगे उसकी माका—

इन्स्पेक्टरने रोककर कहा—ठहरो महराज, ठहरो। गुस्सेके दौरमें पुलीसके आगे सब बातें न कह डालनी चाहिए, उससे विपत्तिमें पड़ सकते हो। फिर षोड़शीकी ओर देखकर कहा—तुम जाना चाहो तो हम तुमको सकुशल घर पहुँचा दे सकते हैं। चलो, और देर न करो।

अब तक षोड़शी सिर झुकाये चुपकी खड़ी थी, उसने गर्दन हिलाकर जताया, नहीं। पुलीसके छोटे बाबूने होठ दबाकर हँसते हुए कहा—जान पड़ता है, जानेमें अभी देर है?

षोड़शीने मुँह उठाकर उनकी ओर देखा, लेकिन जवाब दिया इन्स्पेक्टर बाबूको। बोली—आप लोग जाइए, मेरे जानेमें अभी देर है।

"देर है? हरामजादी, तेरा खून न कर डालूँ तो मैं मनोहर चक्रवर्तीका बेटा नहीं!—" कहकर तारादास पागलकी तरह उछल कर शायद सचमुच षोड़शी-पर कठिन प्रहार कर बैठता, लेकिन इन्स्पेक्टर बाबूने पकड़ लिया और डॉटकर कहा—फिर अगर ऐसी ज्यादती की, तो मैं तुमको थानेमें पकड़कर ले जाऊँगा। चलो, भले आदमीकी तरह घर चलो।

यों कहकर वह इस आदमीको एक तरहसे खींचकर ही वहाँसे हटा ले गये, किन्तु तारादासने उनके हितोपदेशपर कान नहीं दिया। जितनी दूरतक सुनाई दिया, वह जोर गलेसे षोड़शीकी माताके सम्बन्धमें अनाप शनाप बकता और षोड़शीकी हत्या करनेकी कड़ीसे कड़ी कसमोंकी घोषणा करता हुआ गया।

पुलिसके सम्पर्कके सब लोग सचमुच ही बिदा हो गये, या कहीं कोई छिपा रह गया, इस बारेमें निःसंशय होनेके लिए धूर्त्त एककौड़ी दबे पाँव जब बाहर चला गया, तब जीवानंदने इशारेसे षोड़शीको और भी थोड़ा पास बुलाकर अत्यन्त क्षीण कण्ठसे पूछा—तुम इन लोगोंके साथ क्यों नहीं गई?

षोड़शीने कहा—इन लोगोंके साथ तो मैं आई नहीं थी।

जीवानन्दने कुछ देर चुप रहनेके बाद कहा—तुम्हारी जमींदारीको छोड़ देनेकी कारवाई करनेमें दो-चार दिनकी देर होगी; किन्तु रुपए क्या तुम आज ही ले जाओगी?

षोड़शीने कहा— दे दीजिए।

जीवानन्दने बिछौनेके गुप्त स्थानमें हाथ डालकर नोटोंकी एक गड्डी खींचकर निकाली। उन नोटोंको गिनते-गिनते, षोड़शीके मुखकी ओर बार-बार गौरसे देखकर, जरा हँसते हुए कहा,—मुझे किसी काममें लज्जा नहीं मालूम होती, लेकिन मुझे भी ये नोट तुम्हारे हाथमें देते हुए एक रुकावट—एक झिझक-सी लग रही है।

षोडशीने शान्त नम्र स्वरमें कहा—लेकिन इन्हें ही तो देनेकी बात थी।

जीवानन्दके पीले उतरे हुए चेहरेपर क्षणभरके लिए लज्जाकी लाल आभा दौड़ गई। उसने कहा—बात चाहे जो हुई हो षोड़शी, मुझे बचानेमे तुमने जो खोया है, उसका मूल्य रुपयोंमें लगा रहा हूँ, यह मनमें लानेकी अपेक्षा मेरा न बचना ही बल्कि अच्छा था।

षोड़शीने उसके मुखके ऊपर दोनों आँखोंकी अचंचल दृष्टि टिकाकर कहा—लेकिन स्त्री-जातिका मूल्य तो आप हमेशासे रुपयोंसे ही लगाते आ रहे हैं।

जीवानन्द कुछ उत्तर न देकर बैठा रहा। षोड़शीने कहा—अच्छा, आज अगर आपका वह मत बदल गया हो तो रुपए न हो रहने दीजिए। आपको कुछ भी न देना होगा। किन्तु मुझे क्या आप सचमुच ही अब भी नहीं पहचान पाये? अच्छी तरह ध्यान देकर देखिए तो भला!

जीवानन्द चुपचाप ताकता रहा, बहुत देरतक उसकी आँखोंके पलक भी नहीं झपके। इसके बाद धीरे-धीरे सिर हिलाते हुए बोला—जान पड़ता है, पहचान गया हूँ। बचपनमें तुम्हारा नाम अलका था न?

षोड़शी हँसी नहीं; लेकिन उसका सारा मुखमण्डल उज्ज्वल हो उठा। बोली—मेरा नाम षोड़शी है। भैरवीका दस महाविद्याओंके सिवा और कोई नाम नहीं रह जाता। किन्तु आपको अलकाकी याद है?

जीवानन्दने उत्सुकताशून्य कण्ठसे कहा—कुछ कुछ याद क्यों नहीं है। तुम्हारी माके होटलमें जब बीच-बीचमें मैं खाने जाता था, तब तुम छ सात सालकी बालिका थी। लेकिन तुमने तो मुझे अनायास ही पहचान लिया!

इस स्वर और उसके छिपे हुए अर्थका अनुभव करके षोड़शीने पहले कुछ उत्तर नहीं दिया। अन्तको सहज भावसे कहा—इसका कारण यह है कि उस समय अलकाकी अवस्था छः सात वर्षकी नहीं, नव-दस वर्षकी थी। और आपको शायद इसका खयाल भी आ सकता है कि उसकी माता उसे आपका वाहन कहकर हँसा करती थी। इसके सिवा आपके मुखमें और चाहे जो फेर-बदल हुआ हो, दाहिनी आँखके उस तिलमें कभी कोई परिवर्तन नहीं होगा। अलकाकी माका खयाल आता है?

जीवानन्दने कहा—आता है। उनके संबंधमें तारादास जो कुछ कहता गया, वह भी समझ पा रहा हूँ। वह जीवित हैं?

षोड़शीने कहा—नहीं। दस बरस हुए, उनको काशी-लाभ हो गया। आपको वह बहुत प्यार करती थीं—क्यों न?

जीवानन्दके शीर्ण मुखके ऊपर अबकी उद्वेगकी छाया आ पड़ी। उसने कहा—हाँ, एक बार मुसीबतमें पड़कर उनसे मैंने सौ रुपए उधार लिये थे, जान पड़ता है, फिर वे चुकाये नहीं जा सके।

सहसा षोड़शीके दोनों होठ दबी हुई हँसीसे खिल उठे; किन्तु उसने उसी दम उसे रोककर सहज भावसे कहा—आप उसके लिए मनमें कोई क्षोभ न रखिएगा। अलकाकी माने वे रुपए आपको उधार नहीं यौतुक (दहेज) समझकर ही दिये थे।

क्षणभर चुप रहकर फिर कहा—आज बेशुमार सम्पत्तिके समय वे सब दुःखकी बातें शायद आपको याद न आना चाहेंगी, शायद उस दिनके सौ रुपयोंके मूल्यका आज हिसाब लगाना भी कठिन होगा, किन्तु चेष्टा करनेसे इतना तो अवश्य याद आ सकता है कि उस दिन भी ठीक ऐसा ही दुर्दिन था। आज षोड़शीका ऋण ही बहुत भारी जान पड़ता है, किन्तु उस दिन उस छोटी-सी अलकाकी कुलटा माताका ऋण भी कुछ कम भारी नहीं था।

जीवानन्दने आहत होकर कहा—वही समझ सकता, अगर वह उन थोड़ेसे रुपयोंके लिए मुझे अपनी बेटीसे ब्याह करनेके लिए लाचार न करतीं।

षोड़शीने कहा—ब्याह करनेको उन्होंने लाचार नहीं किया था, बल्कि लाचार किया था खुद आपने। किन्तु वह सब अप्रिय भद्दी आलोचना रहने दीजिए। आपसे तो अभी कह चुकी हूँ कि आज अब उन तुच्छ थोड़ेसे रुपयोंके मूल्यका निरूपण संभव न होगा। लेकिन अलकाकी माके जीवनका सम्बल—सारी जमा-पूँजी—उतनी ही थी। लड़कीकी सद्गति करनेके लिए उसके सिवा और कुछ भी जब उनके हाथमें न था, तब उन कुछ रुपयोंके साथ लड़की भी उन्हें आपके ही हाथमें सौंपनी पड़ी। किन्तु ब्याह तो आपने किया नहीं, किया था केवल एक तमाशा। इसलिए सम्प्रदानके साथ ही जो आप गायब हुए, सो शायद यही कल पहले पहल दिखे।

जीवानन्दने कहा—किन्तु सुना है, उसके बाद तो तुम्हारा सच्चा ब्याह हो गया है।

षोड़शीने धीरज नहीं खोया। वैसी ही शान्त गम्भीरताके साथ कहा—इसके माने यह कि और एक आदमीके साथ? यही न? किन्तु निरपराध निरुपाय बालिकाके भाग्यमें यह विडम्बना अगर घट ही गई हो, तो भी तो आपके साथ उसका कोई सम्पर्क नहीं है।

जीवानन्दने कुण्ठित होकर कहा—षोड़शी, तब तुम बहुत छोटी थीं, बहुत-सी बातें तुम ठीक-ठीक नहीं जानतीं। तुम्हारी मा अगर आज जीवित होतीं तो वह गवाही देतीं कि उन्होंने सचमुच क्या चाहा था। तुम्हारे पिताको आजसे पहले मैंने कभी नहीं देखा, केवल उस कन्या-दानकी रातको उनका नामभर सुना था। लेकिन मैंने स्वप्नमें भी कल्पना नहीं की थी कि वही यह तारादास है, और तुम्हीं वह अलका हो।

षोड़शीने चटपट बाधा देकर कहा—आज भी तो कल्पना करनेका प्रयोजन नहीं है।

जीवानन्दने कहा—न हो, लेकिन तुम्हारी मा जानती थीं कि केवल तुमको तुम्हारे बापके हाथसे अलग रखनेके लिए ही उन्होंने जो हो, एक—

ब्याहकी लकीर खींच रक्खी थी? शायद ऐसा ही हो। अलकाकी मा

अव जीती नहीं है, अलका ही मै हूँ या नहीं--इस वातको लेकर भी आपको दुश्चिन्तामें पड़नेकी जरूरत नहीं। किन्तु आज यह वात मै आपको वता जाऊँगी कि मै क्यों उन लोगोंके साथ नहीं गई और क्यों मैंने अपना सर्वनाश करनेमे कहीं कुछ वाकी नहीं रक्खा। कल आपको सन्देह हुआ था कि शायद मै लिखना-पढना जानती हूँ,--लिखना-पढ़ना तो एककौड़ी भी जानता है, वह नहीं,—किन्तु मेरे जो गुरु हैं, वह हाथमें रखकर कुछ दान नहीं करते, इसीसे आज उन्हींके चरणोंमें अपनी इस तरह वलि देनेमें भी मुझे रुकावट या हिचक नहीं हुई।

जीवानन्द कुछ देर चुपचाप सिर झुकाये रहकर धीरे-धीरे सिर उठाकर वोला—लेकिन मान लो, असल वात अगर तुम प्रकट करके कहो, तो—

षोडशीने तुरन्त कहा—असल वात क्या? व्याहकी वात? लेकिन वही तो झूठ है! व्याह तो हुआ नहीं। इसके सिवाय वह समस्या अलकाकी है, मेरी नहीं। मै सारी रात यहाँ विता देकर वह किस्सा कहूँ भी, तो उससे सर्वनाशकी मात्रा तनिक भी कम न होगी। लेकिन वह वात तो मैं अव नहीं सोचती। इस समय मेरा वड़ा दुःख मैं खुद नहीं हूँ,—वह आप हैं। सोचा था कि शायद आपमें वेहद साहस है, उसके आगे आपके अपने प्राण भी शायद तुच्छ हैं, किन्तु आज देखा, वह मेरी भूल थी। यही नहीं कि आज आपने केवल एक निरापराध नारीके कलकके मूल्यसे ही अपनेको वचाना चाहा था, वल्कि एक दिन जिस अनाथ लड़कीको अथाहमें वहाकर केवल आत्म-रक्षा की थी, उसे पहचाननेे तकका साहस आपको नहीं हुआ।

कुछ देर तक चुप रहकर जीवानन्द अकस्मात् कह उठा—षोडशी, आज मैं इतना नीचे गिर गया हूँ कि गृहस्थकी कुलवधूकी दोहाई देनेपर भी तुम मन-ही-मन हँसोगी, लेकिन उस दिन अलकाको व्याह कर वीजगाँवके जमींदार-वशकी वहू कहकर समाजकी गर्दनपर लाद देना ही क्या अच्छा काम होता?

षोड़शीने विना किसी सकोचके उत्तर दिया—सो तो ठीक नहीं जानती, किन्तु यह जानती हूँ कि वह सच्चा काम होता। जिसके सम्पूर्ण दुर्भाग्यको जानकर भी, जिसे हाथ फैलाकर ग्रहण करनेमें आप नहीं हिचके, उसे इस तरह छोडकर अगर भाग न जाते, तो आज आपके भाग्यमे इतनी वडी लांछना घटित न होती। वह सत्य ही आज आपको इस दुर्गतिसे वचा सकता। किन्तु मै वेकार वक

रही हूँ; इस समय ये सब बातें आपके आगे कहना निष्फल है। मैं जाती हूँ—आप कुछ भी देनेकी चेष्टा करके मेरा और अपमान न करिएगा।

जीवानन्दने कुछ नहीं कहा, लेकिन एककौड़ीको दर्वाजेके किनारे देख पाकर वह एकाएक जैसे कगाल होकर कह उठा—एककौड़ी, तुम्हारे यहाँ कोई डाक्टर है? एक बार खबर देकर बुला सकते हो? वह जो चाहेंगे मैं वही दूँगा।

षोड़शी चौंक उठी। अपने अभिमान और उत्तेजनाके भीतरसे अबतक उसकी दृष्टि सम्पूर्ण विपरीत दिशामें ही बंधी हुई थी।

एककौड़ीने कहा—डाक्टर है क्यों नहीं हुजूर, हमारे वल्लभ डाक्टरके हाथमें खासा यश है। और उसने समर्थनके लिए भैरवीकी ओर ताका।

षोड़शी कुछ नहीं बोली, किन्तु जीवानन्द व्यग्र कण्ठसे कह उठा—उन्हींको बुलानेके लिए किसीको भेजो एककौड़ी, अब और एक मिनटकी भी देर न करो। और देखो, यहाँ सब खाली बोतलें पड़ी हुई हैं, किसीसे कह दो गर्म पानी करके ले आवे। ये सब कहाँ गये?

एककौड़ीने कहा—यही निवेदन करने तो आ रहा था हुजूर, पुलीसके डरसे कौन किधर भाग गया है, कुछ पता नहीं, किसीको ढूँढ़े नहीं पाया।

जीवानन्दने कहा—कोई नहीं है? सब भाग गये?

एककौड़ीने कहा—सब, सब, आदमीका पुतला भी नहीं है। वे क्या आदमी हैं हुजूर? कहाँ, मैं तो—

जीवानन्द व्याकुल होकर कह उठा—तो क्या डाक्टर नहीं लाया जा सकेगा एककौड़ी?

एककौड़ीने बाधा पाकर मन-ही-मन लज्जित होकर कहा—लाया क्यों न जा सकेगा हुजूर। मैं आप ही जाता हूँ, अभी वह घरमें ही है। लेकिन पानी गर्म करने जानेसे तो बड़ी देर हो जायगी? इसके सिवा हुजूरको अकेला—

लेकिन बात पूरी करनेका अवसर नहीं मिला। भीतरकी एक उच्छ्वसित दुःसह वेदनासे जीवानन्दका चेहरा पलभरमें ही विवर्ण हो उठा और उसी वेदनाको दबानेके लिए वह पेटके बल झुककर अस्फुट कण्ठसे कह उठा—ओह! अब और नहीं सहा जाता!

पोडशीको जैसे कहींसे कठिन आघात लगा। इतना बड़ा करुण और हताश कण्ठस्वर भी ऐसे उद्दण्ड पाषंडके मुखसे निकल सकता है—यह जैसे सपनेमें भी वह नहीं सोच सकी थी। असलमें मनुष्य कितना दुर्वल, कितना निरुपाय है, दुःख और वेदनामें मनुष्य मनुष्य कितने एक हैं, कितने अपने हैं—यह वात मनमें सोचकर उसकी आँखोंमें आँसू आ गये। किन्तु दम-भरमें ही अपनेको सँभाल कर उसने हतवुद्धि एककौड़ीकी ओर देखकर कहा—तुम जाकर वल्लभ डाक्टरको वुला लाओ एककौड़ी, यहाँ जो कुछ करना है, वह मैं कर लूँगी। राहमें अगर किसीको देख पाओ तो उसे भेज देना। कहना, अव पुलीसका कुछ भी डर नहीं है।

एककौड़ीने आश्चर्य नहीं किया, वल्कि, खुश होकर कहा—डाक्टर साहवको वह जहाँ भी मिलेंगे, जरूर ही लाऊँगा। लेकिन रसोईघर क्या मैं आपको दिखाता जाऊँ?

पोडशीने सिर हिलाकर कहा—नहीं। मैं आप ही खोज लूँगी। लेकिन तुम किसी भी कारणसे कहीं देर न करना।

"जी नहीं, मैं गया और आया"—कहते कहते एककौड़ी तेजीके साथ चला गया।

६

खोज-खाजकर जव पोड़शीने रसोईघरसे पानी गर्म करके वोतलमे लाकर उपस्थित किया तव कोई लौटकर न आया था। जीवानन्द वैसे ही पट पडा हुआ था। पैरोंकी आहटसे मुँह उठाकर देखकर वोला—तुम हो? डाक्टर नहीं आया?

पोड़शीने कहा—अभी तो उन लोगोंके आनेका समय नहीं हुआ। यह कहकर उसने हाथकी दोनों वोतलें विछौनेके एक किनारे रख दीं।

जीवानन्द इस वातपर जैसे ठीक विश्वास नहीं कर सका। वोला—अभी तक आनेका समय नहीं हुआ? डाक्टर कितनी दूर रहते हैं, जानती हो?

पोड़शीने कहा—जानती हूँ। लेकिन पन्द्रह मिनटके भीतर ही क्या आया जा सकता है?

जीवानन्दने नि श्वास छोड़कर कहा--कुल पन्द्रह मिनट हुए? मैने सोचा कि दो घटा तीन घण्टा या और भी अधिक समय हो गया, जब एककौड़ी डाक्टरको बुलाने गया था। शायद वह भी डरके मारे यहाँ न आवे अलका।--

इतना कहकर वह चुप होकर फिर पेटके बल लेट रहा। उसके कण्ठस्वर और आँखोकी दृष्टिमें व्याकुल निराशा और घबराहट पूर्ण रूपसे व्यक्त हो उठी।

षोड़शीने क्षणभर चुप रहकर स्नेहके स्वरमें कहा--डाक्टर जरूर आवेंगे। तब तक गर्म पानीकी बोतल खीचकर पेटके नीचे रख लीजिए न।

जीवानन्दने वैसे ही सिर हिलाकर कहा--नहीं, रहने दो। उससे कुछ नहीं होता, केवल कष्ट बढ़ता है।

षोड़शीने सहसा कोई प्रतिवाद नहीं किया। इस उपायहीन रोगग्रस्त मनुष्यके मुखसे अपना बचपनका नाम इतनी देर बाद जैसे यही पहले पहल उसके कानोंमें गुनगुन करके एक अज्ञात रहस्यका अर्थ कहनेकी चेष्टा करने लगा। जान पड़ता है, इसीमे मगन होकर वह अपना और पराया, आगेका और पीछेका, सब कुछ भूलकर अभिभूत-सी खड़ी थी। एकाएक जीवानन्दके प्रश्नसे ही उसे होश आया। —अलका?

अबकी वह इस नामकी उपेक्षा नहीं कर सकी। बोली--जी।

जीवानन्दने कहा—अब भी समय नहीं हुआ? शायद वह न आवेंगे, शायद कहीं चले गये हैं।

षोड़शीने कहा—मैं निश्चय जानती हूँ, आवेंगे—वह कहीं गये नहीं।

जीवानन्दने कहा—घरसे क्या कोई भी लौटकर नहीं आया?

षोड़शीने कहा—नहीं।

जीवानन्दने घड़ी-भर चुप रहकर कहा—जान पड़ता है, वे लोग अब नहीं आवेंगे। जान पड़ता है, एककौड़ी भी एक बहाना करके चला गया।

षोड़शी चुप हो रही। जीवानन्दने खुद भी जान पड़ता है, एक व्यथाको सँभालकर क्षणभर बाद ही कहा—सभी गये, वे जा सकते हैं—केवल तुम्हारा ही जाना न होगा।

षोड़शीने पूछा--क्यों?

जीवानन्दने कहा--जान पड़ता है, मै बचूँगा नहीं—इसीसे। मुझे साँस

लेनेमें भी कष्ट होता है। जान पड़ता है, पृथ्वीपर हवा ही नहीं है।

षोड़शीने पूछा—आपको क्या बहुत कष्ट हो रहा है?

जीवानन्दने कहा—हूँ।—अलका, मुझे तुम माफ कर दो।

षोड़शी चुप हो रही। जीवानन्दने जरा थमकर फिर कहा—म भगवानको नहीं मानता, उसकी जरूरत भी नहीं होती। लेकिन थोड़ी देर पहले मै मन ही मन उन्हींको पुकार रहा था। जीवनमें अनेक पाप किये हैं, जिनका कोई आदि अन्त नहीं है। आज रह रहकर केवल यही जान पड़ रहा है, शायद सब देना सिरपर लादे ही जाना होगा।

षोडशी वैसे ही चुपचाप खड़ी रही। जीवानन्दने कहा—मनुष्य अमर भी नहीं है, मरनेकी अवस्थापर भी किसीने निशान नहीं लगा रक्खा, किन्तु यह यत्रणा अब नहीं सही जाती—ओह—मैयारे!—कहते-कहते उसका सारा शरीर व्यथाकी असह्य तीव्रतासे जैसे सिकुड़ उठा।

षोडशीने आँख उठाकर देखा, उसकी केवल देह ही नहीं माथेपर भी पसीनेकी बूँदें निकल आई है और विवर्ण मुखमें, दोनो मुँदी हुई आँखोंके नीचे, रक्तहीन दोनो होठ एक अत्यन्त कठिन रेखामे सम्बद्ध हो गये हैं।

पल भरके लिए षोडशीने जैसे कुछ सोचा, जान पड़ता है थोड़ी-सी दुविधा भी वह मनमे लाई। उसके बाद उस पीडितकी शय्यापर, उस अभागेके पास जाकर बैठ गई। गर्म पानीकी दोनों बोतलें सावधानीसे खींचकर उसके पेटके नीचे दबाते ही जीवानन्दने केवल क्षणभरके लिए एक बार आँखें खोलकर फिर मूँद लीं। षोड़शीने आँचलसे उसके माथेका पसीना पोंछ दिया और हाथसे डुलानेका कोई पखा न होनेके कारण अपने उस आँचलको ही समेटकर वह उससे धीरे धीरे हवा करने लगी।

जीवानन्द कुछ नहीं बोला, केवल अपना दाहिना हाथ धीरे-धीरे उठाकर षोडशीकी गोदके ऊपर रखकर चुपचाप पड़ा रहा।

दस-पद्रह मिनट तक ऐसे ही चुपचाप कट जानेके बाद जीवानन्दने ही पहले बात की। पुकारा—अलका?

षोडशीने कहा—आप मुझे षोड़शी कहकर पुकारिए।

जीवा०—अब क्या अलका नहीं हो सकती हो?

षोड़शी--ना।

जीवा--किसी दिन किसी भी कारणसे क्या--

षोड़शी--आप और बात कीजिए।

लेकिन और बात जीवानन्दके मुँहसे नहीं निकली, केवल रोकी गई लम्बी साँसकी बची हुई हवा-भर उसकी छातीके सामनेके हिस्सेको थोड़ा फैलाकर शून्यमे लीन हो गई।

दो-तीन मिनटके बाद षोड़शीने धीमे स्वरमें पूछा--क्या आपका कष्ट कुछ भी कम नहीं हुआ?

जीवानन्दने गर्दन हिलाकर कहा--जान पड़ता है, कुछ कम हुआ है। अच्छा, अगर मैं बच गया तो क्या तुम्हारा कोई उपकार नहीं कर सकता?

षोडशीने कहा--नहीं, मैं संन्यासिनी हूँ। मेरा कोई भी उपकार किसीके भी द्वारा होना सभव नहीं।

जीवानन्द कुछ देर स्थिर रहकर एकाएक कह उठा--अच्छा, ऐसा क्या कुछ भी नहीं है, जिससे सन्यासिनीको भी खुशी हो?

षोडशीने कहा--सो शायद है, किन्तु उसके लिए आप क्यों व्यस्त हो रहे हैं?

अबकी जीवानन्दने जरा-सी क्षीण हँसी हसकर कहा--मुझमें ढेरसे दोष हैं, किन्तु यह दोष आजतक किसीने मुझे नहीं दिया कि मैं पराया उपकार करनेके लिए व्यस्त हो उठता हूँ। इसके सिवा अभी कह रहा हूँ, इसलिए वह अच्छा होकर भी करूँगा--इसका भी कोई ठीक नहीं है। ऐसा ही है! ऐसा ही है! जान पड़ता है, सारे जीवनमे इसके सिवा मेरा और कुछ भी नहीं है।

षोडशीने चुपचाप और एक बार उसके माथेका पसीना पोंछ दिया। जीवानन्दने सहमा वह हाथ पकड़ लिया और कहा--संन्यासिनीको क्या सुख-दुख नहीं होता? पृथ्वीपर क्या ऐसा कुछ भी नहीं है, जिससे वह खुश हो?

षोड़शीने कहा--लेकिन वह तो आपके हाथमे नहीं है?

जीवानन्दने कहा--जो मनुष्यके हाथमे हो ऐसा कुछ?

षोड़शीने कहा--वह है। किन्तु अच्छे होकर जब आप पूछेंगे, तभी बताऊँगी।

उसके हाथको जीवानन्दने सहसा छातीके पास खींच कर बार-बार सिर

हेलाकर कहा--ना, ना, और अच्छे होकर नहीं--इसी कठिन पीड़ाके भीतर ही मुझसे कहो। मैंने मनुष्यको बहुत दु ख दिया है, आज अपनी व्यथाके बीच पराई व्यथा, पराई आशाकी बात जरा सुन लूँ। अपने दु खकी आज एक सद्गति हो।

षोड़शी अपने हाथको धीरे-धीरे छुड़ाकर स्थिर होकर बैठी रही। जीवानन्द खुद भी लगभग एक मिनट स्थिर रहकर बोला--अच्छा, न हो, सबकी तरह मैं भी तुमको आजसे षोडशी कहकर ही पुकारूँगा। कलसे आजतक मैंने इतनी यंत्रणाके बीच भी बीच-बीचमें अनेक बातें सोची हैं। जान पड़ता है, उनमें तुम्हारी ही बात अधिक है। मैं बच गया, लेकिन तुमको जो यहाँ--

षोड़शी चटपट कह उठी--लेकिन मेरी बात रहने दीजिए।

बाधा पाकर जीवानन्दने क्षणभर चुप रहकर धीरेसे कहा--मैं समझ गया षोडशी! तुम यह भी नहीं चाहतीं कि मैं तुम्हारे लिए कुछ सोचूँ। ऐसा ही होना उचित जान पड़ता है! यह कहकर एक नि श्वास छोड़कर वह चुप हो रहा।

षोड़शी बिस्तर छोड़कर उठ खड़ी हुई। जीवानन्दने आँखें खोलाकर कहा--तुम भी चलीं?

षोडशीने गर्दन हिलाकर कहा--नहीं। घर बहुत ही गंदा हो रहा है, जरा साफ कर डालूँ। कहकर वह सम्मतिकी अपेक्षा न करके ही घरके काममें लग गई। घरके अधिकांश दर्वाजे और खिड़कियाँ ही अबतक खोली नहीं गई थीं। बहुत जोर लगाकर खींच-खाँचकर उनके खोलते ही उन्मुक्त आकाशसे घड़ीभरमें ही रोशनी और हवा उस घरमें भर गई। फर्शके ऊपर कूड़े-कचरेका ढेर जगह-जगह प्रतिदिन बढता ही जा रहा था। एक झाडू ढूँढ़ लाकर षोडशीने वह सब साफ कर डाला। फिर आँचलसे बिछौना झाडकर दोनों तकिये यथास्थान ठीकसे रख दिये। तब भी जीवानन्दने एक शब्द नहीं कहा। केवल उसके मुरझाये उदास चेहरेपर एक स्निग्ध प्रकाश जैसे कहींसे आकर धीरे धीरे जमा हो रहा था। षोडशी काम कर रही थी, और वह केवल दोनों आँखें फैलाए चुपचाप जिधर वह जाती थी उधर नजर दौड़ा रहा था--जैसे सुशृंखला और सफाई क्या चीज है, इसीको वह सारी वेदना भूलकर ससारके सबसे उत्तम विस्मयकी तरह जीवनमें यही पहले पहल देख रहा था।

सहसा बाहर बहुतसे पैरोंकी चाप सुनकर पोड़शी झाड़ू रखकर सीधी खड़ी हो गई। एककौड़ीने दर्वाजेके पाससे मुँह निकालकर कहा—डाक्टरबाबू आये हैं।

पोडशीने कहा--उन्हें ले आओ और वह अपनी पहलेकी जगहपर बैठ गई।

दूसरे ही क्षण जिन चिकित्सकका हाथ-जस इस तरफ अत्यन्त प्रसिद्ध है, उन्हीं वल्लभ डाक्टरने घरके भीतर प्रवेश किया और पोडशीको यहाँ इस तरह बैठे देखकर वह एकदम आश्चर्यमें पड़ गये।

एककौड़ीने उँगलीसे दिखाकर कहा--यही हुजूर हैं। अगर आप आराम कर सकें डाक्टर बाबू, तो बखशीसकी तो बात हीं छोड़ दीजिए--हम सभी आपके गुलाम हो जाएँगे।

डाक्टर चुपचाप आकर शय्याके पास उपस्थित हुए और पाकेटसे काठका चोंगा निकालकर मुँहसे कुछ कहे बिना ही रोगकी परीक्षा करनेमें लग गये। देर तक खूब देख-भालकर उन्होंने बहुत बड़े डाक्टरकी तरह ही राय दी कि अत्याचार करनेसे यह रोग पैदा हुआ है। सावधान न होनेसे पिलही या जिगरका पकना असंभव नहीं है, और उससे प्राणोंका भी भय हो सकता है। किन्तु सावधान होनेसे नहीं भी पकेगा। और तब भय भी कम है। मगर यह बात निश्चय है कि दवा खाना जरूरी है।

जीवानन्दने प्रश्न किया--इस हालतमें कलकत्ते जाना सम्भव है या नहीं, बता सकते हैं?

डाक्टरने कहा--अगर जा सकें तो संभव है, नहीं तो किसी तरह संभव नहीं।

जीवानन्दने फिर पूछा--यहाँ रहनेसे अच्छा हो जाऊँगा, आप बता सकते हैं?

डाक्टरने अत्यन्त विज्ञकी तरह सिर हिलाकर जवाब दिया--जी नहीं हुजूर, सो नहीं बता सकता। लेकिन यह बात निश्चय है कि यहाँ रहनेसे भी अच्छे हो सकते हैं और कलकत्ते जाकर भी नहीं हो सकते।

जीवानन्दने मन-ही-मन नाराज होकर फिर और प्रश्न नहीं किया। डाक्टर साहब दवाके लिए आदमी भेजनेका इशारा करके उपयुक्त फीस लेकर बिदा हो गये। एककौड़ी उन्हें साथ लेकर दर्वाजेके बाहरतक भेज आया। लौट आनेपर जीवानन्दने उसके मुँहकी ओर देखकर कहा--क्या होगा एककौड़ी?

एककौड़ीने साहस देकर कहा--डर क्या है हुजूर, दवा आती ही होगी।

डाक्टरका एक शीशी मिक्श्चर पीनेसे ही सब अच्छा हो जायगा।

जीवानन्दने सिर हिलाकर कहा--नहीं एककौड़ी, तुम्हारे वल्लभ डाक्टरका मिक्श्चर तुम लोगोंके लिए ही रहे, मेरे लिए तुम कलकत्ते जानेका बंदोबस्त आज ही कर दो। यह कहकर वह जिस दर्वाजेसे षोड़शी कई मिनट पहले अन्यत्र हट गई थी, उसी ओर उत्सुक दृष्टिसे ताकने लगा।

किन्तु कोई भी लौटकर न आया। दो-तीन मिनट बाद उनके अधैर्यने मना किया नहीं माना। उन्होंने कहा--उनको जरा बुला देकर एककौड़ी, तुम जाओ और मेरे जानेका कुछ बंदोबस्त करो। आज मुझे जाना ही चाहिए।

पलभरमें ही एककौड़ी इस इशारेको समझ गया और "जो हुक्म हुजूर" कहकर फौरन् चल दिया। किन्तु उसे लौटनेमें देर होने लगी और दस-पंद्रह मिनट बाद जब वह यथार्थ ही लौट आया, तब अकेला ही आया। बोला--वह नहीं है, घर चली गई हुजूर!

जीवानन्द विश्वास नहीं कर सका। व्यग्र व्याकुल कंठसे कह उठा--मुझसे कहे बिना चली जायँगी? ऐसा नहीं हो सकता एककौड़ी।

विश्वास करना सचमुच ही कठिन है। अलका कोई व्यवस्था किये बिना ही चली गई, एक शब्द तक नहीं कह गई--डाक्टरकी राय सुनकर जाने तकका उसे धैर्य नहीं रहा--यह बात जीवानन्द जैसे किसी तरह अपने मनमें नहीं ग्रहण कर सका।

एककौड़ीने कहा--हाँ हुजूर, वह डाक्टर बाबूके जानेके बाद ही चली गई है। बाहर गोपाल कावरा बैठा है, उसने देखा है कि भैरवी सीधी चली गई।

जीवानन्दने फिर प्रतिवाद नहीं किया। एककौड़ीने कहा--तो फिर जरा सम-यसे ही यात्रा करनेकी व्यवस्था जाकर करूँ हुजूर?

"हाँ, वही करो" कहकर जीवानन्दने करवट बदलकर दीवारकी ओर मुँह कर लिया। एककौड़ी कलकत्ता-यात्राके बारेमें अनेक छोटी-मोटी बातोंका ब्योरा पूछने लगा किन्तु मालिककी ओरसे किसी बातका जवाब नहीं मिला। कोई बात उसके कानोंमें पहुँची कि नहीं, यह भी ठीक समझमें न आया।

७

जमींदारके विलास-कुञ्जसे षोड़शी जब चुपचाप खिसक गई, उस समय जान पड़ता है, नौ-दस बजे होंगे। इस तरह चले आना, उसे अशोभन जान पड़ने लगा, किन्तु मनमें यह बात भी आई कि कह-सुनकर बिदा माँगकर आना और भी अशोभन, और भी जियादती होती। किन्तु फाटकके बाहर आकर उसने देखा कि एक पग भी और आगे नहीं बढ़ा जा सकता। अबकी देरमें वर्षा होनेके कारण किसानोंका धान रोपनेका काम-काज समाप्त नहीं हो पाया था। उन्हींके बीचसे गाँवमें जानेका एकमात्र मार्ग है। इस प्रकाश्य दिनकी बेलामें इस राहसे मुँह ऊँचा या नीचा करके किसी तरह जानेके लिए उसके पैर नहीं उठे। आकाशकी बिजली जैसे दमभरमें अन्धकारके पर्देको उठाकर बादलोंसे ढकी हुई पृथ्वीकी छातीको सुस्पष्ट कर देती है, दूरके किसानोंने भी ठीक वैसे ही पलभरमें षोड़शीकी बीती हुई रातको उसके आगे अत्यन्त अनावृत कर दिया। आवरणके नीचे जो एक चीज ढकी हुई थी, उसे—किसी भी मनुष्यके जीवनमें एक रातके ही बीच इतना बड़ा व्यापार घटित हो सकता है—देख पाकर, वह क्षणभरके लिए विमूढ़-सी हो रही। पूरा एक दिन भी नहीं बीता, केवल कल शामको अपमानकी प्रबल ताडनासे आगे-पीछे सोचे-विचारे बिना वह इसी राहसे चलकर गई है। किन्तु उसके बाद? उसके बादकी घटना घटित होनेमें मनुष्यको बहुत युग लग सकते हैं, लेकिन उसे कुछ देर न लगी। एक जादूका तमाशा-सा हो गया, इसीसे आज उस परिचित राहके ही उस छोरपर उसके लिए क्या अपेक्षा किये हुए है, इसकी वह कल्पना भी न कर सकी। फाटकके बाहर बागके किनारे-किनारे एक पगडंडी नदीकी ओर चली गई है। केवल सामने दिखाई पड़ गया, इस कारण ही वह इसी रास्तेसे चलकर धीरे-धीरे नदीके किनारे आकर खड़ी हो गई। इधर गाँव नहीं है, गऊ-बकरियाँ चरानेके लिए कभी किसी चरवाहे लड़केके अलावा इस राहपर साधारणत. कोई आता-जाता नहीं। इस एकान्त स्थानमें सन्ध्या होनेकी अपेक्षा करके वह अँधेरेमें घर लौटनेका इरादा करके एक प्राचीन इमलीके पेड़के नीचे बैठ गई। इतनी देर तक वह एक बवंडरके बीच पड़ी हुई थी, इससे

वर्त्तमानकी चिन्ताके सिवा और कोई खयाल उसके मनमें नहीं था। अब जो भविष्य आग्रहके साथ उसकी राह देख रहा है, उसीकी बात वह एक एक करके सिलसिलेवार विचारने लगी। उसके छोटेसे गाँवमे अवतक कोई भी बात किसीके जाननेको बाकी न रही होगी। जमींदारने उसे पकड़ मँगाया है, सारी रात अटका रक्खा है। इन कई दिनोंके अत्याचारसे गाँवमें यह बात ऐसी एक मामूली बात हो उठी हैं कि इसके लिए विशेष कोई चिन्तित होनेकी आवश्यकता नही है। यहाँतक कि उसने झूठ बोलकर क्यों जमींदारको मजिस्ट्रेटके चगुलसे बचाया है, इस रहस्यको खोलनेके लिए भी गांवमें बुद्धिमान लोगोंका अभाव न होगा। यह एक बड़ी भारी घूसका मामला है, यही सब लोग समझेंगे। किन्तु असल विपत्ति या मुश्किल है उसके पिता तारादासको लेकर। बहुत दिनोंसे बाप-बेटी दोनोंका सहज सबध भीतर ही भीतर बिगड़ रहा था—उसमे सड़ाँध पैदा हो गई थी, पर बाहरका कोई आदमी इस बातको नहीं जानता था। अब वह घृणाकी भापसे बहुत जगह घेरकर जलता रहेगा। इसकी ज्वालाको किसीकी भी नजरसे छिपा रखना सभव न होगा। संसारमें ऐसा कोई काम नहीं है जो उस आदमीके लिए असाध्य हो। उसके अनेक कुकर्मोंमें बाधा देनेसे बाप और बेटीके बीच छिपे तौरपर अनेक बार बड़ी बड़ी लड़ाईयाँ हो चुकी हैं, जिनमें हमेशा बापको ही हार माननी पड़ी है। अथ च, अनेक कारणोंसे तारा-दासको अब तक षोड़शीकी माताके सम्बन्धमें चुप ही रहना पड़ा है। किन्तु आज जब तारादासने क्रोधके वश होकर एक बार बात कह डाली है, तब वह किसी तरह चुप नहीं रहेगा। इस कलककी स्याही दोनों हाथोंसे उछालकर जब अपने साथ और एक आदमीका सर्वनाश कर चुकेगा तब वह इस गाँवसे निकलेगा। यह कोई तुच्छ बात नही है यह उसके सारे भविष्यको अन्धकारमय कर देगी—यह भी षोड़शी दूरसे स्पष्ट देखने लगी। किंतु उस अन्धकारके भीतर क्या संचित है, उसकी कोई झलक नजर नही आई—कुछ भी आभास नही मिला।

दिन चढने लगा। यहाँ बैठकर भीतरके उद्योग आयोजनका अस्पष्ट कोला-हल बीच-बीचमें उसके कानोंतक पहुँचने लगा और उसीके बीचबीचसे जीवानन्दके मुखसे निकलनेवाला अलकाका नाम, उसकी सलज्ज क्षमा-भिक्षा, उसकी व्याकुल प्रार्थना, ऐसा ही न जाने कितना क्या, जैसे एक भूली हुई

कविताकी टूटी कड़ियोंकी तरह, रह-रहकर उसके मनके भीतर अकारण ही चक्कर लगाने लगा। अथ च, जो संकट उसीके लिए इस गाँवके बीच उसीकी राह देखता हुआ खड़ा है, उसकी विभीषका उस मनके भीतर ही प्रतिक्षण वैसी ही भीषणसे भीषणतर होती रही।

क्रमश धीरे-धीरे सूर्यदेव आकाशके दूसरे छोरमें ढल पड़े और उसीकी एक प्रदीप्त किरणसे मुँह फेरते ही एकाएक वहुत दूरपर उस पारके मैदानमें जमींदारकी पालकी जाती हुई उसे देख पड़ी।

इस ओर ही जब वे लोग गये हैं, तव एक समय उसके पासहीसे गये हैं। उसने खयाल नहीं किया। शायद चेष्टा करनेसे थोड़ा देखा भी जा सकता। किन्तु अव अनजानमें ही एक लम्वी साँस उसके मुँहसे निकल गई।

तीसरा पहर चौथे पहरमें वदला और फिर संध्या होनेमें भी अधिक देर नहीं लगी। षोड़शी गाँवकी ओर जानेके लिए जव उठकर खड़ी हुई, तब उस झुटपुटेमें भी आदमी पहचाना जा सकता था, किन्तु मैदानमें कोई न था। इस निर्जन राहको पार करके षोडशी जव अपने घरके सामने आकर पहुँची, तव अँधेरा गहरा हो चुका था। किसीसे भेंट न होनेपर भी उसके मनमें आँधी-सी उठ रही थी; किंतु सदर-दर्वाजेमें ताला वंद देखकर उसे जैसे एक कठिन संकटसे छुटकारा मिल गया और उसने चैनकी साँस ली। घूमकर पिछवाड़े खिड़कीके द्वारपर जाकर देखा, वह भीतरसे वंद है। उसने इसीकी प्रत्याशा की थी। किन्तु खिड़कीको वाहरसे खोल लेनेका कौशल वह जानती थी। शीघ्र ही भीतर प्रवेश करके उसने देखा, हर एक कोठरीमें ताला वंद है, घरमें कहीं कोई नहीं है। सारे घरमें अँधेरा छाया है, शून्य घर खाँव-खाँव कर रहा है।

सन्यासिनीको अनेक उपवास करने होते हैं, खाने-पीनेकी वात उसने सोची भी न थी। कहीं एकान्तमें थोड़ा सोनेको मिल जाता तो इस समय वह जी जाती। उसे और कुछ न चाहिए था। लेकिन कोठरीके भीतर प्रवेश करनेका जब उपाय नहीं है, तव वरामदेमें ही एक किनारे अपनी धोतीका आँचल विछाकर वह लेट गई। तारादास घरमें नहीं है, क्यों नहीं, किस लिए कहाँ गया है-- इन सव कूट प्रश्नोंके सिलसिलेसे उसका अत्यन्त थका हुआ शरीर और मन

वहुत ही सहजमें दूर हट गया, और आज रातभर तो वह विना किसी उपद्रवके सो सकेगी, इतनी-सी तृप्ति लेकर ही वह देखते-देखते सो गई।

सवेरे जव षोड़शीकी ऑख खुली, तव उसके साथ ही सदर दर्वाजेका ताला खोलनेका शब्द हुआ, और जो विधवा स्त्री मदिर और घरका सव काम-काज करती थी, वह भीतर दाखिल हुई। षोड़शीको देखकर वह अधिक विस्मित नही हुई। वोली--कव आई माँ? रातको ही? जान पड़ता है, खिड़कीका दरवाजा खोलकर ही भीतर आई थीं?

षोड़शीने सिर हिलाकर साथ देकर कहा--हाँ।

तव वृद्धाने कहा--यही वात सव लोग आपसमें कह-सुन रहे थे वेटी कि राजा वावू तो वेवक्त चले गये, अवकी वार तुमको छोड़ देंगे। जान पड़ता है, कुछ खाया-पिया नही तुमने। क्या करूँ मा, घरकी चाबी तो वावाठाकुर रख नही गये, अपने साथ ले गये हैं। सो ले जाने दो, मैं दूकानसे चावल-दाल लाये देती हूँ, दो-चार लकड़ियाँ भी जुटा दूँगी। नहा आओ और जो कुछ हो, दो मुट्ठी राँध कर मुँहमें डाल लो। उसके वाद जो होना होगा सो होगा।

षोड़शीने पूछा---वापू कहाँ गये है, तू जानती है रानीकी मा?

रानीकी माने कहा—सुनती तो हूँ मा, कोई उनकी वहनकी लड़की है, उसीको लेने गये हैं—आते ही होंगे। आज वड़े वावूके नातीकी मानताकी पूजा है न, आज क्या कहीं और वह रह सकते हैं? मदिरमें तो एक पहर रात रहेसे ही धूमधाम हो रही है मा।

षोड़शीको चट खयाल आ गया कि आज मगलवार है। आज जनार्दन रायके नातीकी मानताकी पूजाके उपलक्षमें जय-चडीके मंदिरमें वहुत वड़ा समारोह है। वह देवीकी भैरवी है, इतने वड़े समारोहमें उसे हाजिर होना ही होगा।

यहाँपर जनार्दन रायका सक्षिप्त-सा परिचय देना आवश्यक है। यह आदमी जैसा धनी है, वैसा ही भयानक। एक वार एक प्रजाके वेगार देनेके उपलक्षमें षोड़शीके साथ उसका वड़ा भारी मनोमालिन्य हो गया था, जिसे कोई भी पक्ष अव तक नहीं भूला। और केवल षोड़शी ही नहीं, इस तरफके सभी लोग उससे वहुत डरते हैं। जमींदार उसकी खातिर करता है, एककौड़ी उसकी मुट्ठीमें है। जिस साल लगान वसूल नहीं होता, यही महाशय जमींदारकी तरफसे मालगुजारी

खजानेमें जमा करते हैं। दो सौ बीघेमें इनकी अपनी खेती होती है और धान-चावल-गुड़ आदिसे लेकर तिजारती और महाजनोंके कारोबार तक, सब पर इनका एकाधिकार है, यह कहनेमें भी कुछ अत्युक्ति नहीं। अथ च, यही बड़े बाबू एक दिन बहुत ही गरीब थे। सुना जाता है कि यह सभी उनके मँझले दामाद मि० बसुका रुपया है। वह पश्चिमके किसी एक हाईकोर्टके बड़े बैरिस्टर हैं। विलायतसे लौटकर, प्रायश्चित्त करके, जातिमें मिल गये हैं। आज उन्हीं मि० बसुके एकमात्र पुत्रके सब प्रकारके मंगलकी कामनासे चण्डी देवीकी पूजाका आयोजन हो रहा है। और इस आयोजनकी केवल आज ही नहीं, महीने भरसे अधिक समयसे गाँवके भीतर चर्चा हो रही है। बड़े बाबूकी जो लड़की इतने बड़े घरमें ब्याही गई है, उसका नाम हैमवती है, और उसे षोड़शी बचपनसे पहचानती है। वह षोड़शीसे अवस्थामें कुछ छोटी होगी। मंदिरके आँगनमें आज भी जो पाठशाला लगती है, उसमें वह भी सबके साथ पढ़ने आती थी। और खेलनेके बहाने यदि किसी दिन षोड़शी वहाँ उपस्थित हो जाती तो देवीकी भैरवी होनेके कारण हैमवती भी सबके साथ उसे प्रणाम करके उसके पैरोंकी धूल माथेसे लगाती। आज वह बड़े घरकी घरनी है। आज शायद उसकी देहमें सौन्दर्य और ऐश्वर्यमें हीरा-मोतियोंकी भरमार है, आज शायद वह उसे पहचान भी नहीं सकेगी। किन्तु एक दिन ऐसा नहीं था। उस दिन उसकी अवस्था और रूप कुछ भी अधिक न था, तो भी वह जो इतने बडे घरकी बहू बनी, सो केवल इन्हीं देवीके माहात्म्यसे—ऐसा सुना जाता है। लोग कहते हैं कि किसी एक अमावस्याको एक सिद्ध तांत्रिक देवीके दर्शन करने आये थे, उनसे राय महाशयने गुप्त रूपसे इसी कन्याके कल्याणके लिए सब याग-यज्ञ करा लिये थे। यह पुत्र भी उन्हीं सिद्धकी कृपाका फल है। हताश होकर हैमवतीने विदेशमें इन्हीं देवीकी मानता मानकर यह पुत्र प्राप्त किया है।

दासीने काम करते-करते कहा—मा, मंदिरसे आज अचानक कब बुलावा आ जाय—कहा नहीं जा सकता। नहाने-धोनेका काम इसी समय न कर डालो?

षोडशी अन्यमनस्क होकर सोच रही थी, मंदिरमें बुलाये जानेके नामसे चौंक पड़ी। किन्तु उसके कारण न सही पर दिन चढ़नेके पहले ही निरालेमें स्नान

कर लेना अच्छा है, यह सोचकर वह फौरन खिड़कीके रास्ते पोखरमें नहाने चली गई। इस पोखरमें मोहल्लेका कोई आदमी शायद ही कभी आता है, इसीसे वहाँ किसीसे भेंट न हुई। लौट आकर देखा कि भीगी धोती बदलनेके लिए और दूसरी धोती नहीं, शरीर और सिर पोंछनेके लिए एक अँगोछा तक बाहर नहीं। यह लक्ष्य करके रानीकी मा खिन्न हो उठी। वह तारादासको देख नहीं सकती थी। उसने क्रोधित होकर कहा—वह दुष्ट तिनके तक तालेमें बन्द कर गया है। मेरे एक धुली हुई मटकेकी (एक प्रकारका मोटा रेशम) धोती है मा, ले आऊँ? उसमें तो कोइ दोष नहीं।

षोडशीने कहा—नहीं, रहने दे।

दासीने कहा—गीली धोती पहने रहोगी मा, तो बीमार न हो जाओगी?

षोड़शी चुप रही। दासीने उसके सूखे हुए मुँहकी ओर देखकर व्यथाके साथ कहा—कौन जाने कै दिनसे उपवास किए हुए हो मा! मलिच्छ दुष्टोंके घरमें तुम पानी तक न छुओगी, यह मै खूब जानती हूँ। इस बेला थोड़ेसे चावल और दाल, दूकानसे न सही, अपने घरसे लाकर रख न जाऊँ मा?

षोडशीने सिर हिलाकर केवल इतना कहा—वह सब इस समय रहने दे रानीकी मा!

यह दासी कायस्थकी लड़की थी। समझती बूझती थी कि इसका कोई फल न होगा। इसलिए उसने अधिक जोर नहीं डाला। काम-काज समाप्त करके, जाते समय पूछा—बाबा ठाकुर मदिरमें देख पड़ें तो क्या अलग बुलाकर यहीं भेज दूँ?

षोडशीने कहा—कोई जरूरत नहीं, रहने दे।

दासीने कहा—ताला लगानेकी जरूरत नहीं, तुम भीतरसे ही बंद कर देना—लेकिन, अच्छा मा, कोई अगर कोई बात पूछे तो क्या—

षोडशी क्षणभर चुप रही। इसके बाद सिर उठाकर बोली—हाँ, कह देना, मै घरपर ही हूँ। और रानीकी माके चले जानेपर उसने दरवाजा नहीं बंद किया—वह वैसे ही रहा। सामनेके बरामदेके ऊपर चुपचाप सिर झुकाये बैठे बैठे दो-तीन घंटेका समय कब किस तरह बीत गया, षोड़शीको खबर ही नहीं हुई। केवल एक अनिर्दिष्ट वेदनाकी तरह उसके मनके भीतर यह भाव था कि अब

उसके लिए एक अत्यन्त कठोर समय आ रहा है। परीक्षाके छलसे एक अत्यन्त गंदा आदोलन गाँवभरमें जोरशोरसे उठ खड़ा होगा। अथ च, उससे लड़नेके लिए, आत्मरक्षाके लिए, आज उसके मनने किसी तरह कमर कसना नहीं चाहा। बल्कि वह केवल यही बात चुपके चुपके कहने लगा कि इन सब बातोंसे बड़ी बात तुम्हें याद रखनी होगी कि तुम सन्यासिनी हो,। जानमें हो, अनजानमें हो, इच्छासे हो, अनिच्छासे हो, यह सबसे बड़ा सत्य अस्वीकार करनेसे काम न चलेगा कि यह तुम्हारी देह एक दिन देवताके लिए अर्पण कर दी गई थी। तुमको दावपर लगाकर जो लोग मिथ्याकी बाजी खेल रहे थे, वे आपसमें मार-पीट काट-कूट करके भले ही मरें, तुम इस बार मुक्ति लेकर बच जाओ।

ठीक इसी समय दरवाजा खोलकर मंदिरके बूढ़े पुरोहित आँगनमें आकर उपस्थित हुए। बोले—मा, वे लोग तुमको बुला रहे हैं।

'चलो' कहकर षोडशी फौरन उठ खड़ी हुई। क्यों, कहाँ, या कौन बुलाते हैं, यह उसने कुछ न पूछा। मानों वह इसीकी राह देख रही थी। जान पड़ता है, उसके सिरपर खड़ी हुई विपत्तिके संबंधमें कुछ आभास देनेकी पुरोहित बेचारेकी इच्छा थी, किन्तु भैरवीके मुँहकी ओर देखकर कोई भी बात उसके मुँह तक न आई।

आज मंदिरके आँगनका द्वार खुला था। प्रवेश करते ही षोडशीने देखा कि उस तरफ भी दीवालसे लगकर काले रगके दो बकरे (पाँठा) बँधे हैं और बरामदेके एक किनारे पूजाकी ढेरकी ढेर सामग्री है। वहाँ पाँच-छ. प्रौढा स्त्रियाँ बातचीतमें और काममें बहुत ही व्यस्त हो रही हैं और सबसे बढ़कर प्रचण्ड कलरव आँगनके नाट्यमंदिरके भीतर हो रहा है।

वहाँ राय महाशयकी सुदृश्य और लम्बी-चौड़ी शतरजी बिछी हुई है। राय महाशयको बीचमें करके गाँवके वयोवृद्ध लोगोंका दल यथायोग्य मर्यादाके अनुसार बैठा हुआ संभवत विचार कर रहा है, और वह विचार षोड़शीके ही बारेमें है। कहा नहीं जा सकता, अब तक उसे कौन सुन रहा था, अथ च आश्चर्य है कि जिसके सुननेकी सबसे अधिक आवश्यकता है, उसके पास आकर खड़े होते ही यह सैकड़ों कंठोंकी बेलगाम वक्तृता पलभरमें एकदम बंद हो गई।

कुछ क्षणो तक किसी ओरसे ही कोई प्रसग नहीं उठाया गया। मर्द सब षोडशीके परिचित हैं और औरते भी जो काम छोड़कर एक एक करके खंभेकी

आइमें आकर खड़ी हुई, उसकी अपरिचित नहीं हैं। केवल जो औरत सबके बाद मदिरके भीतरसे निकलकर, धीरे धीरे आकर, ठीक उसके सामनेके दोहरे खमेके सहारे चुपचाप खड़ी होकर, उसकी ओर एकटक ताकने लगी, अपरिचित होनेपर भी, षोड़शीने दमभरमें समझ लिया कि वह हैमवती है। यह लड़की अपने पतिका घर छोड़कर वहुत दिनोंसे अपने वापके घर नहीं आ पाई थी, इससे उसके संवधमें उसके मायकेके इस देशमें तरह-तरहकी अफवाहें उत्तरोत्तर फैलती जा रही थीं। मसलन् वह अखाद्य खाना खाती है, घॉघरा और जूते-मोजे पहनती है, रास्तेमें मर्दोंके हाथमें हाथ डालकर घूमती है, एकदम क्रिस्तान मेम वन गई है--ऐसी ही न जानें क्या क्या। किन्तु आज षोड़शीको यह कोई वात देखनेको नहीं मिली। एक मूल्यवान् वनारसी साड़ी और शरीरपर दो-एक किमती गहनोंके सिवा जूता, मोजा, घाघरा कुछ भी न था। वल्कि मॉगमें सिंदूर और पैरोंमें महावर खूव मोटा करक लगाया गया था। देखनेसे जान पड़ता था कि यह सव विशेष करके वह केवल आजके ही लिए लगा आई है। वह सुन्दरी अवश्य है लेकिन कोई असा-रण सुदरी नहीं। देहका रग शायद कुछ सावलापन लिये है, लेकिन धनी घरोंकी स्त्रियो जैसे हर रोज मॉज-घिसकर रगको चमका लेती हैं, यह भी वैसा ही है, उसमे अधिक नहीं। एक नज़र डालते ही पल-भरमें षोड़शीने समझ लिया कि इस धनी घरकी गृहिणीने जैसे धनके आडवरसे अपनी देहको गहनों-कपड़ोंकी दूकानकी तरह नहीं सजाया, वैसे ही लज्जा या निर्लज्जता किसीकी ज्यादतीसे भी अपने वचपनके गॉवको वदनाम नहीं किया। वह लड़की चुपचाप षोड़शीकी ओर ताकती रही, शायद अन्ततक इसी तरह चुप रहेगी, लेकिन इसीके सामने अपनी शीघ्र ही होनेवाली दुर्गतिकी आशकासे षोड़शीकी गर्दन लज्जासे झुक गई।

और भी दो-तीन मिनट सन्नाटेमें वीत जानेपर वृद्ध सर्वेश्वर शिरोमणिने सवसे पहले वात की। षोड़शीको लक्ष्य करके अत्यन्त साधु भाषामें उन लोगोंकी राय जाहिर करके कहा--आज हैमवती अपने पुत्रके कल्याणके लिए जो पूजा चढा रही हैं, उसमें तुम्हारा कोई अधिकार नहीं रहेगा--अपना यह इरादा उन्होंने हम लोगोंको वताया है। उन्हें आशका है कि तुम्हारे द्वारा उनका कार्य सुसिद्ध न होगा।

पोड़शीका मुख एकदम पीला पड गया था, लेकिन उसके स्वरमें अस्पष्टता या हिचकिचाहट नही थी। वोली--अच्छी वात है। उनका काम जिससे सुसिद्ध हो वे वही करें।

उसके कंठस्वरकी इस सुस्पष्टतासे सर्वेश्वर शिरोमणिको अपने गलेमें भी जैसे जोर मिला। वोले--केवल इतनी ही वात तो नहीं है। इस गॉवके हम सव भद्र पुरुषोंने आज यह सिद्धान्त स्थिर कर लिया है कि अव देवीका काम तुमसे नहीं होगा। अव तुमको माताकी भैरवी रखनेसे काम नहीं चल सकता। कोई है, जरा तारादास ठाकुरको तो वुला लाओ।

एक आदमी उन्हें वुलाने गया। पोड्शीके मुखमें जो इसका उत्तर आया था, वह पिताके नामसे वही रुक गया। उसने सिर उठाकर एकाएक कह डाला-- क्यों नहीं चल सकता? किन्तु कहकर वह जैसे आप ही चौंक पड़ी। भींडके भीतरसे किसी एक आदमीने कहा-- यह तुम अपने वापके मुँहसे ही सुन पाओगी।

षोड्शीने इस वातका कोई उत्तर नहीं दिया। उसने आँख उठाकर देखा, उसका पिता लगभग दस वर्षकी किसी लडकीको साथ लिये आ रहा है और उसके पीछे और एक सयानी स्त्री साथ-साथ आ रही है। इन दोनोंमेसे किसीको पोड्शीने पहले नहीं देखा, तथापि समझ गई, यही उसकी वुआ है और यह लडकी ही उस अपरिचित वुआकी वेटी है।

यह सव राय महाशयकी कृपा है, इस वातको सभी लोग भीतर-ही-भीतर जानते थे, पोड्शीके भी जाननेको वाकी न था। राय महाशयके चुप रहने पर भी, उनकी आखके इशारेसे उत्साह पाकर भी, तारादास पहले कुछ वोल न सका। वादको अटक अटक कर उसने जो कहा, वह भी अधिकांशमें स्पष्ट नहीं हुआ। कामकी वात केवल यह समझमें आई कि जिलेके मैजिस्ट्रेट साहव वहुत खफा हुए हैं, और इसे सेवायतकी गद्दीसे न हटाया गया तो अच्छा न होगा।

यही यथेष्ट था। एक कलरव उठा, वहुतोंने ही राय दी कि इतने वडे गुरुतर मामलेमें किसीकी भी कोई आपत्ति नहीं चल सकती। चल नहीं सकती, यह ठीक है। जो लोग चुप रहे, उन्होंने भी इस सत्यको मान लिया। कारण, क्यों नहीं चल सकती, ऐसा प्रश्न करनेका दु साहस किसीमें भी न था। अथ च, आश्चर्य है कि यही हुआ। कोलाहल थमने पर शिरोमणि महाशय, जान पड़ता है, इसी

फैसलेको और भी थोड़ा विस्तारसे बतलाने जा रहे थे, सहसा एक धीमी आवाज सुनाई दी—बाबूजी ?

सभीने सिर उठाकर देखा। राय महाशयने खुद भी मुँह उठाकर, इधर-उधर देखकर, अन्तमें कन्याके स्वरको पहचान पानेपर स्नेहके स्वरमें कहा—क्यों बेटी ?

हैमवतीने और भी जरा मुँह बढ़ाकर कहा—अच्छा बाबूजी, साहब गुस्सा हो गये हैं, यह कैसे जाना गया ?

बड़े बाबू राय महाशय पहले कुछ विस्मित हुए, उसके बाद बोले—जाना क्यों नहीं गया बेटी, खूब अच्छी तरह जाना गया है।—कहकर उन्होंने तारा-दासकी तरफ देखा।

हैमने पिताकी दृष्टिका अनुसरण करके कहा—परसोंसे तो सभी सुन रही हूँ बाबूजी। उससे क्या उन्हींकी बात सच मान लेनी होगी ?

राय महाशयको इसका ठीक जवाब ढूँढे नहीं मिला। उन्होंने केवल यही कहा —न मानना ही क्यों चाहिए, जरा सुनूँ तो ?

हैमने तारादासके आगे खड़ी हुई उस छोटी लड़कीको दिखाकर कहा—इसे जब खोजकर ले आये हैं, तब झूठ बोलना क्या इतना असंभव है बाबूजी ? इसके सिवा सच-झूठकी तो जाँच करनी होती है, इस तरह एकतरफा राय तो नहीं दी जा सकती।

यह सुनकर सभीको आश्चर्य हुआ, यहाँ तक कि षोडशी तक विस्मित नेत्रोंसे उसकी ओर ताकने लगी। इसका उत्तर दिया सर्वेश्वर शिरोमणिने। उन्होंने मुसकानसे मुखको सरस करके कहा—बिटिया बैरिस्टरकी गृहिणी है न, इसीलिए जिरह कर रही है। अच्छा, मैं चुप किये देता हूँ। यह कहकर हैमकी ओर देख-कर उन्होंने कहा—यह देवीका मंदिर है—पीठस्थान है, यह तो तुम मानती हो ?

हैमने गर्दन हिलाकर कहा—मानती क्यों नहीं हूँ।

शिरोमणिने कहा—यह बात अगर है तो तारादास ब्राह्मणका बेटा होकर क्या देवमंदिरमें खड़े खड़े झूठ बोलेगा पगली ?

इतना कहकर उन्होंने प्रबल हँसीसे सम्पूर्ण स्थानको गुँजा दिया।

उनकी हँसीका वेग थोमा पड़नेपर हैमने कहा—आप खुद भी तो वही हैं शिरोमणि चाचा। अथ च इसी देवमंदिरमें खड़े होकर तो झूठी बातोंकी वर्षा कर

गये हैं। मैंने कहा है कि उनके हाथों पूजा करानेसे मेरा काम सिद्ध न होगा, —यह जो आपने कहा, इसमें विन्दु-विसर्ग भी तो सत्य नहीं है!

शिरोमणि हतबुद्धि हो गये। राय महाशयने अत्यन्त कुपित होकर तीक्ष्ण स्वरमें कहा—किसने तुमसे कहा हैम कि सच नहीं है—जरा सुनूँ तो?

हैमने जरा हँसकर कहा—मैं कहती हूँ कि यह सच नहीं है बाबूजी! इसका कारण यह है कि कभी ऐसी बात कहना तो दूर, मैंने ऐसा सोचा भी नहीं।—मैं उनसे ही पूजा कराऊँगी, इससे मेरे बेटेका चाहे कल्याण हो चाहे अकल्याण। फिर षोडशीकी ओर देखकर कहा—आप शायद मुझे पहचान नहीं पा रही हैं; किन्तु मुझे आपकी वैसी ही याद बनी है। चलिए मंदिरमें हम लोगोंका समय जा रहा है।

कहकर वह एक पग आगे बढाकर जान पड़ता है, षोड़शीके ही पास जा रही थी; लेकिन अपनी लड़कीके निकट अपमानित होनेके इस दारुण आघातसे पिताका धीरज जाता रहा। वह अकस्मात् खड़े होकर भीषण स्वरमें कह उठे—कभी नहीं। मैं प्राण रहते उसे किसी तरह मन्दिरमें न घुसने दूँगा। तारादास, कहो तो उसकी माका हाल! एक बार सभी लोग सुन लें। मैंने सोचा था, उसकी चर्चा न करनी पड़ेगी, सहजमें ही काम हो जायगा।

शिरोमणिने साथ ही साथ उठकर कहा—ना तारादास, रहने दो। इनकी बातपर शायद आपकी लड़की विश्वास न करेगी राय महाशय, इससे वही कहे! चण्डी देवीकी ओर मुँह करके वहीं अपनी माका हाल खुद कह दे! क्यों न चौधरी महाशय? और, तुम क्या कहते हो जी जोगेन भट्टाचार्य? वह आप ही कहे—है न ठीक?

गाँवके इन दोनों दिग्पालोंके सांघातिक अभियोगसे उपस्थित सभी लोग जैसे विभ्रान्त हो उठे। षोड्शीके पीले सूखे दोनों होठ कुछ कहनेकी चेष्टामें बारबार काँपने लगे। क्षण-भर बाद शायद वह कुछ कह भी डालती; किन्तु हैमवतीने तेजीके साथ उसके पास आकर उसका हाथ पकड़ लिया और शान्त दृढ स्वरमें कहा—ना, कुछ भी हो, आप कोई बात न कहिएगा—कुछ न बोलिएगा। फिर पिताके मुखपर तीव्र दृष्टि डालकर बोली—आप लोग इनका विचार करना चाहते हैं तो स्वयं ही करें; किन्तु इनकी माताकी बात इनके अपने मुखसे कुबूल करा लें, इतना

बड़ा अन्याय मैं किसी तरह नहीं होने दूँगी।—ये लोग जो कर सकते हैं, करें, आप मेरे साथ मन्दिरके भीतर चलिए। यह कहकर वह और किसी ओर ध्यान न देकर षोडशीको एक तरहसे जोर करके ही सामनेकी ओर ठेलकर ले चली।

८

मन्दिरके भीतर एक तरफ़ स्थिरभावसे खड़े होकर षोडशीने कहा—नहीं बहन, मैं पूजा नहीं करूँगी।

'क्यों?' कहकर हैमने विस्मयके साथ गौरसे देखा, भैरवीका मुँह मुरझाया हुआ है, किसी तरहके आनन्द या उत्साहका लेशमात्र भी नहीं है और उसके प्रश्नका उत्तर उसने जैसे कुछ सोचकर ही दिया। बोली—इसका कारण अगर कभी बतानेकी जरूरत हुई तो केवल तुमको ही बताऊँगी, लेकिन आज नहीं। इसके सिवा मैं खुद भी बहुत कम पूजा करती हूँ बहन। जो लोग यह काम नित्य करते हैं, आज भी वही करें। मैं यहीं खड़े रहकर तुम्हारे बच्चेको आशीर्वाद करती हूँ—वह चिरंजीवी हो, स्वस्थ-नीरोग हो, 'मनुष्य' हो।

सन्तानके प्रति भैरवीके इतने बड़े आशीर्वादसे भी माताके मनसे अप्रसन्नता नहीं मिटी। उसने कुंठित स्वरमें कहा—किंतु आजका दिन थोड़ा और तरहका है दीदी! आप अपने हाथसे पूजा न करेंगी तो मैं उन लोगोंके निकट बहुत छोटी हो जाऊँगी—मुझे नीचा देखना पड़ेगा।—कहकर उसने खुले हुए द्वारसे एक बार बाहरकी विक्षुब्ध भीड़की ओर दृष्टिपात किया। षोड़शीकी अपनी दृष्टि भी उसका अनुसरण किये बिना नहीं रह सकी। उस भीड़के लोगोंकी आँखोंमें और चेहरेपर उत्कट कलहके चिह्न स्पष्ट और चचल हो उठे हैं—ठीक वैसे ही जैसे अधीर सैनिकदल केवलमात्र अपने अफसरके इशारेकी अपेक्षामें बड़ी मुशकिलसे अपने युद्धके जोशको रोके हुए है। किन्तु राय महाशयने उन्हें वह इशारा नहीं दिया। वह घोर ससारी या दुनियादार आदमी ठहरे। दमभरमें ही समझ गये कि इस समय इस मामलेमें वह प्रकाश्य रूपसे धनी बेटी-दामादके विरुद्ध आचरण नहीं कर सकते। थोड़ी ही देरमें उनकी लाल लाल आँखें नीचे झुक आईं और किसीसे एक शब्द भी न कहकर वह उठे और धीरे धीरे मंदिरके आगेके आँगनसे चले गये। दो-चार अनुगत व्यक्तियों या मुसाहबोंके सिवा कोई उनके साथ नहीं गया। वृद्ध शिरोमणि महाशय

रह गये और यह जाननेके लिए कि अन्ततक मामला क्या रूप धारण करता है, और भी अनेक लोग ठहर गये।

हैमने विनती करके कहा—माता भैरवीका आशीर्वाद हम मा-बेटोंने सिर-आँखोंपर धारण किया, किन्तु उस आशीर्वादको मैं आपहीके हाथोंसे पक्का करा लेना चाहती हूँ दीदी। अच्छा, मैं अपेक्षा कर सकूँगी, पूजा आज बन्द रहे—जिस दिन आप आदेश करेंगी, उसी दिन यह उद्योग-आयोजन फिर किया जायगा।

षोडशीने सिर हिलाकर कहा—वह सुविधा अब फिर होगी या नहीं, यह बात तो आज निश्चय करके बता नहीं सकती बहन।

हैमवतीने विस्मयके साथ प्रश्न किया—तो क्या फिर आप माता चण्डीकी भैरवी नहीं रहेंगी?

षोडशीने केवल यही कहा—आज भी तो वही (भैरवी) हूँ।

हैमवतीने कहा—तो फिर?

इतना कहते ही उसने देख लिया कि दर्वाजेकी चौखट पकड़े शिरोमणि महाशय खड़े हैं। आँखें चार होते ही वह दर्पके साथ कुछ आगे बढ़कर बोले—तुम्हारे पिता और मैं यही बात तो अब तक कह रहे थे जी! अच्छी बात है, हम लोग ठहर जायँगे, वह कल हो, परसों हो, दो दिन बाद हो, दस दिन बाद हो, पूजा करें। दे इसका जवाब!

हैम षोडशीके मुखकी ओर एकटक ताकती रही, लेकिन उसने कोई जवाब नहीं दिया।

शिरोमणिने भैरवीके मलिन मुखकी ओर कनखियोंसे देखकर हँसकर कहा—बेटी हैम, यह तो सीधा या सहज प्रश्न नहीं है। यह पीठस्थान है, जागते देवताकी जगह है। देवीकी भैरवीके सिवा इस देवताके अंगको स्पर्श करना तो जिस-तिस स्त्रीका काम नहीं है। कलेजेका जोर हो तो रहें यह माताकी भैरवी—हम लोगोंको आपत्ति नहीं है। किन्तु हम जानते हैं, अब इनके लिए यह साध्य नहीं है।

इशारा इतना सुस्पष्ट था कि लज्जासे हैम तकका सिर झुक गया। षोडशीने आप भी अभिभूतकी तरह क्षणभर चुप रहकर अकस्मात् अपनेको आप धक्का मारकर जैसे पूर्ण सचेतन कर लिया। उसने शिरोमणिको कुछ उत्तर नहीं दिया,

किन्तु बूढ़े पुजारीको अकस्मात् एक डाँट बतानेकी तरह वह तीक्ष्णकंठसे कह उठी— पुजारीजी, तुम इधर-उधर किस लिए कर रहे हो? मैं आज्ञा देती हूँ कि देवीकी पूजा यथाविधि करके तुम अपना प्राप्य ले लेना और वाकी मंदिरके भंडारमें वन्द करके चावी मेरे पास भेज देना। फिर हैमकी ओर देखकर कहा—बहुत तैयारी तुमने की है, यह सब नष्ट करना उचित न होगा बहिन। मैं आशीर्वाद किये जाती हूँ, इसीसे तुम्हारे वालकका सर्वांगीण कल्याण होगा। मेरा अपना पूजा आह्निक अभीतक नहीं हुआ, अब मैं चलती हूँ। अगर समय मिला तो फिर आऊँगी। यह कहकर, और वादानुवाद न करके, वह बाहर चली गई। कई क्षण तक सभीके मुँहसे कोई शब्द नहीं निकला, किन्तु उसके बाद ही अपमान और अवहेलासे वृद्ध शिरोमणि अंकुशकी चोट खाये हुए पशुकी तरह पागल हो उठे। उनका वयसोचित मर्यादा-बोध और कपट-गांभीर्य न जाने कहाँ गायब हो गया। नजरोंसे ओझल हुई षोड़शीके लिए एक अभद्र इशारा करके वह चिल्ला उठे—अबकी मन्दिरमें घुसनेपर गर्दनिया खाना होगा, यह जान ले! नष्ट-भ्रष्ट स्त्री कहींकी! सोचा होगा गाँवमें कोई आदमी नहीं है। आज भी जनार्दन राय जीते हैं, आज भी सर्वेश्वर शिरोमणि मरा नहीं, यह जान ले!

इस सब अभिशाप और आस्फालनका प्रतिवाद करनेके लिए वहाँ कोई न था, बल्कि उन्हींकी बातको पुष्ट करनेके लिए औरतोंके बीचसे किसी एक बूढ़ी स्त्रीने कह डाला—अभागीको झाड़ू मारकर निकाल दीजिए शिरोमणि महाशय, बड़ा घमंड है! बड़ा दिमाग है! जमींदारके बागके बगलेमें एक रात एक दिन बिताकर आकर कहती है—बाबूकी तबियत खराब हो गई थी! अगर खराब ही हुई हो तो तेरा क्या!—किन्तु कहते-कहते ही प्रतिमाके ऊपर दृष्टि पड़ते ही उसकी ईर्ष्यापीड़ित उच्छृंखल जीभ दम-भरमें ही शान्त और संयत हो गई। उसने फौरन अपने दोनों कानोंमें दोनों हाथ लगाकर, कंठस्वरको अत्यन्त मधुर और कोमल करके इसके बाद यों कहना शुरू किया—माताकी भैरवी है, निन्दा करनेसे महापाप होगा। निन्दा मैं नहीं करती, लेकिन इसीसे क्या इतना स्वेच्छाचार अच्छा है। साहब भला आदमी था, इसीसे छोड़ दिया, नहीं तो झूठ बोलनेके अपराधमें बापके ही हाथोंमें हथकड़ी न पड़ जाती!—किन्तु उपस्थित किसी व्यक्तिने इसमें साथ नहीं दिया। षोड़शी चाहे जो करे, वह चण्डी माताकी

भैरवी है, यह सत्य अकस्मात् उपस्थित न हो जाता तो जान पड़ता है बुरी बातोंका प्रवाह उस समय इस तरह न थमता। किन्तु इससे क्या होता है, शिरोमणि महाशयका क्रोध कम नहीं हुआ। वह फिर कुछ कहना चाहते थे कि हैमवतीने मलिन अवसन्न मुख उठाकर धीरे-धीरे कहा—ये सब बातें इस समय रहने दीजिए शिरोमणि चाचा! कुछ जल्दी तो है नहीं—मेरे बच्चेकी पूजा हो जाने दीजिए।

'वही हो, वही हो'—कहकर शिरोमणि अपनी दुस्सह खीझ और क्रोध उस समय भरके लिए दबाकर चले गये, और हैम पास ही एक किनारे निर्जीव-की तरह चुपचाप बैठ गई। इस लज्जाजनक और अत्यन्त अप्रियकर आलोचनाको उसने इस तरह बन्द अवश्य कर दिया, पुरोहितने भी आडम्बरके साथ देवीकी पूजा शुरू कर दी, किन्तु हैमने अपने हृदयके भीतर उत्साह और आनन्दका लेशमात्र भी ढूँढे नहीं पाया। अपने पिताके और लोगोंके दुर्व्यवहारसे और विशेष करके इस वृद्ध ब्राह्मणकी निन्दनीय नीचतासे उसे जैसे अरुचि उत्पन्न हुई, वैसे ही षोड़शीके अद्भुत आचरणसे भी उसका मन भीतरसे एक ग्लानि और अज्ञात संशयकी व्यथासे भर गया। तथापि पुरोहितका काम मशीनकी तरह बिना रुके चलता रहा। जाग्रत देवताकी पूजा, बलिदान, होम आदि सब धीरे-धीरे बड़ी देर तक होता रहा। उसके पुत्रके कल्याणके लिए किये जानेवाले शुभ कर्ममें कहीं कोई विघ्न नहीं घटित हुआ, किन्तु षोड़शी फिर लौटकर नहीं आई।

दासीकी गोदमें लड़केको देकर हैम जब घर लौटकर आई, तब तीसरा पहर हो गया था। आकर उसने देखा, उसके पिता अथवा शिरोमणि महाशय, किसीने भी इतना समय आलस्यमें नहीं बिताया है। बाहरकी बैठकमें तुमुल कोलाहल हो रहा था, उसकी प्रबलता देखकर सहज ही समझमें आ गया कि एक साथ अनेक वक्ता अपना अपना मन्तव्य प्रकट करनेका प्रयास कर रहे हैं। उसकी इच्छा थी कि कोई देख न पावे, इस तरह किसी तरह कतराकर घरके भीतर चली जाय, किन्तु पिताकी नजरको वह बचा न सकी। उन्होंने हाथ हिलाकर बुलाया। कहा—'हैम, जरा इधर एक बार आकर सुन तो जा बेटी।

उसने क्लान्त शरीर और मलिन मुख लिये धीरे धीरे जाकर सामने उपस्थित होते ही देखा, वहाँ केवल एक ही प्राणी चुपका बैठा है, जिसे श्रोता कहकर गिना जा सकता है—वह हैं उसके पति मिस्टर एन्० वसु बैरिस्टर। नवकी मिली हुई

वक्तृताका उपलक्ष एकमात्र वही हैं। डेढ बजेकी गाड़ीसे उनके आनेकी बात जरूर थी, लेकिन ठीक कुछ न था। पतिको देखकर सिरका आँचल जरा और आगे खींचकर वह द्वारकी आड़में खड़ी हो गई। उसके पिताने सस्नेह उलाहनेके स्वरमें कहा—तब तो समझे-बूझे बिना हम लोगोंकी बातोंसे एकाएक चिढ गई थी तू बेटी, लेकिन अब तो अपने कानोंसे ही सब सुन लिया? मामला समझनेमें तो अब कुछ बाकी नहीं है? अब तुम्हीं बताओ बेटी, ऐसी स्त्रीको क्या देवताके स्थानमें रक्खा जा सकता है? यह कुछ लड़कोंका खेल तो है नहीं।

हैमवतीने बहुत धीमे स्वरमें जवाब दिया—आप लोग जो अच्छा समझें, करें।

पिता हँस दिये। बोले—करूँगा क्यों नहीं बेटी, करने ही तो गया था। निर्मल (दामाद) आ गये, अच्छा ही हुआ। अगर कोई मामला-मुकदमा चला तो इनका बल मिलेगा। जान पड़ता है, उन्होंने दूसरी ओरसे जमींदारकी सहायताकी आशका ही की थी, किन्तु शिरोमणि खामखाँ ही गरम हो उठे, और जोरसे चिल्लाकर बोले—गर्दन पकड़कर बाहर कर दूँगा, उसकी और नालिश-फर्याद क्या है जी जनार्दन! जमाई बाबू जब मौजूद हैं, तब वही इसका विचार और फैसला कर दें। वही हमारे जज हैं, वही हमारे मजिस्ट्रेट। हम और किसी जज-मजिस्ट्रेटको नहीं मानते। क्या कहते हो जी जोगेन भाई? तुम्हारी क्या राय है मित्तिर भैया?

यों कहकर उन्होंने कई आदमियोंकी ओर मुसकाते हुए देखा और सहसा कुछ हँस पड़े। इस जगह जोगेन भाई और मित्तिर भैयाकी सम्मति लेनेका तात्पर्य ठीक समझमें नहीं आया, किन्तु यह समझमें आ गया कि बड़े आदमी और दानशील जमाईबाबू विचार करें या न करें, भविष्यमें उनका अनुग्रह पानेका रास्ता शिरोमणि महाशयने अपने लिए कुछ प्रशस्त और सुगम कर रक्खा।

जमाईबाबूका सिरसे लेकर जूतेकी तली तक सभी कुछ निष्कलंक या विशुद्ध साहबोंका-सा था। अतएव इसके जवाबमें मीठी हँसी हँसकर उन्होंने जो जवाब दिया, वह भी खालिस साहबी था। बोले—इन सब महंतों महन्तानियोंकी हरकतें सभी जानते हैं—ये जैसे असाधु हैं, वैसे ही असच्चरित्र। कोई ऐसा° काम नहीं, जिसे ये कर न सकें। किसी भी कारणसे इन्हें प्रश्रय देना उचित नहीं। किन्तु आप लोगोंकी भैरवीने क्या किया है क्या नहीं, यह भी निश्चित रूपसे जान लेना चाहिए।

शिरोमणि कह उठे—भैया निर्मल, जाननेको अब कहीं कुछ बाकी नही है।—क्या कहती हो बेटी, अब भी क्या तुमको सन्देह है ? इसके सिवा उसकी मा—वही तो एक बड़ी बात है। यह कहकर उन्होंने हैमवतीकी ओर विशेष रूपसे कटाक्ष किया। हैम सिर झुकाये स्तब्ध हो रही। उसकी इस सलज्ज चुप्पीसे सबने यही अनुभव किया कि वह भैरवीके विरुद्ध खुलासा सुस्पष्ट अभियोग करनेमें लज्जा और संकोचका अनुभव कर रही है लेकिन उसके संबंधमें अच्छा कहनेको भी उसके पास कुछ नही है।

जनार्दन रायने कन्याको सम्बोधन करके कहा—बेटी, सारे दिन उपास करके तुम्हारा मुँह सूख गया है। जाओ, तुम घरके भीतर जाओ। भैरवीको बुलानेके लिए आदमी भेजा गया है, अगर आई तो तुमको खबर दूँगा।

हैम चली जा रही थी, इसी समय जो आदमी षोडशीको बुलाने गया था, उसने लौट आकर जो कुछ बतलाया, उसका सारांश यह है कि भैरवीने केवल अपने असामी दिगंबर और विपिनके द्वारा ताला तुड़वाकर सब घरोंपर दखल ही नहीं कर लिया है, बल्कि वह राय महाशयके हुक्मकी पर्वाह न करके यहाँ आनेको भी राजी नही हुई। अन्तको केवल फकीर साहबके अनुरोधसे आना मंजूर किया है। जान पड़ता है, दस-पंद्रह मिनटके भीतर ही आ सकती है।

जान पड़ता है, आ सकती है! ठीक है! जलते हुए अंगारपर घीकी आहुति पड़ गई। एक साधारण स्त्रीके ऐसे अभावनीय दुस्साहस और स्पर्द्धाको देखकर प्रतिष्ठित पुरुषोंके मुखसे जो शब्दों और वाक्योंका प्रवाह निकला उसको आद्योपान्त उल्लेख न करके भी एक बात कहनेकी आवश्यकता है और वह यह कि इस भ्रष्ट नारीको केवल इसी घड़ी गाँवसे दूरकर देनेकी ही नहीं, बल्कि ताला तोड़ने और अनधिकार-प्रवेशके लिए पुलीसको सौंपकर जेल भिजवानेकी जरूरत है, यह राय सबने नि संशय होकर प्रकट कर दी। केवल जमाई बाबू ही इस कोलाहलमें शामिल नहीं हुए। बहुत संभव है, वह अपनी साहबी और बैरिस्टरी, दोनोंकी मर्यादा रखनेके लिए ही गम्भीर होकर बैठे रहे। शोर-गुलके कुछ शान्त होनेपर दामाद साहबने प्रश्न किया—यह फकीरसाहब कौन है ? एकाएक यह कहाँसे आ जुटे ?

फकीरसाहबके बारेमें भी अनेक लोगोंने अनेक प्रकारके मत प्रकट किये।

शिरोमणिने उसका सारांश निकालकर कहा—क्या खाक अच्छे हैं! मुसलमान और सिद्ध पुरुष! वह सब कुछ नहीं है, मगर वह किसीकी भी बुराई या हानि नहीं करता। वारुई नदीके किनारे एक वर्गदके पेड़के नीचे अड्डा है, बहुत दिनोंसे है—बीच-बीचमें कहीं चला जाता है और फिर आ जाता है। दो सालसे नहीं था, फिर सुना है कि पाँच-छ दिन हुए, लौट आया है। शायद उसीकी सलाहसे ताले तोड़े गये हैं। कुछ कहा नहीं जा सकता—हजार हो, म्लेच्छ ही तो है!

दामादने पूछा—लेकिन आज कैसे आ गये?

तारादास अब तक चुप ही था, अबकी बोला। कहने लगा— उस पारके उस वर्गदके पेड़ और उसके आसपासकी सब जमीन चण्डी माताकी है। इसीसे जान-पहचान है। फकीरसाहब षोडशीको बहुत चाहते हैं, जब वह यहाँ होते हैं तब षोडशी अक्सर उनके यहाँ जाया करती है। देखा है, उनसे पढ़ती-लिखती भी है।

जमाई बाबूने ठट्ठेके तौरपर कहा—चाहते हैं! विद्या-चर्चा भी चलती है! इन फकीरसाहबकी उम्र क्या है?

तारादासने लज्जित होकर कहा—जी, वह एक बूढ़े आदमी हैं। अवस्था साठ-बासठसे कम नहीं। 'मा' कहते हैं। एक बार षोडशी बहुत बीमार हो गई थी—लगभग मर ही चुकी थी—इन्होंने ही उसे अच्छा किया था। साहब बोले—ओह! यह बात है! उधर भी साधु-फकीर हैं, इधर भी डाकिनी-योगिनी! इन सब भैरव-भैरवीयोंके दलको.. किन्तु बात पूरी नहीं कर पाये, एकाएक पत्नीके चेहरेके एक हिस्सेपर आँख पड़ जानेसे यह असयत बेहूदी बात उसी जगह रुक गई। और किसीने इसमें अपनी बात नहीं जोड़ी, केवल अप्रतिहतगति शिरोमणि महाशय निवृत्त नहीं हुए। अपराधका बाकी अंश दमके साथ संपूर्ण करते हुए कह उठे—एक सौ बार भैयाजी, एक सौ बार। ये सब पाखंडी साले-साली जैसे नष्ट वैसे ही भ्रष्ट हैं!

उन्होंने इतना कहकर अपने दाहिने-बाएँ नजर डालकर जान पड़ता है, कमसे कम जोगेन भाई और मित्तिर भैयाके सिर हिलानेकी प्रत्याशा की। किन्तु अबकी वे भी चुप रहे और द्वारकी आड़में खड़ी हुई हैमवतीका सूखा हुआ मुँह एक क्षणके लिए एकदम लाल हो उठा।

ठीक उसी समय भैरवीको साथ लेकर उस पाखंडी मुसलमान फकीरने धीरे धीरे

पैर रखते हुए आँगनमें प्रवेश किया। किसीको भी इसमें संशय नहीं रहा कि शिरोमणिके जोर गलेसे कहे हुए शब्द उन्होंने सुन लिये हैं।

जल्दी ही जब दोनों पास ही सामने आकर खड़े हो गये, तब किसीके भी मुँहसे सहसा कोई बात नहीं निकली। जरा-सी अभ्यर्थना या बैठनेको कहनेका साधारण शिष्टाचार भी नहीं। अथ च मन-ही-मन सभी जैसे विशेष रूपसे कुछ चंचल हो उठे। शिरोमणि तकको जान पड़ने लगा—जैसे कुछ ठीक नहीं हुआ—जैसे कोई भारी त्रुटि हो गई। अथ च सभी वैसे ही बैठे रहे। मिस्टर वसु साहबके लिए दोनो ही आगन्तुक बिल्कुल अपरिचित थे। दो-तीन मिनट तीक्ष्ण दृष्टिसे वह बार-बार सिरसे पैर तक दोनोंको निहारते रहे। फ़क़ीरसाहबके सिरके बालोंसे लेकर लम्बी दाढी-मूछतक सभी कुछ एकदम बर्फ़की तरह सफ़ेद था। शरीरपर साधारण मुसलमान फ़क़ीरकी पोशाक थी। आम तौरसे जो देखा जाता है, उससे अधिक कुछ नहीं, अथ च जान पडता है, इस सबल सुदीर्घ देहके ऊपर यह सब जैसे अपनी साधारणताको बहुत ऊपर नाँघ गया है। उनके शरीरका रग जलमें भीगकर और धूपमें झुलसकर ऐसा एक तरहका हो गया है कि वह पहले कैसा था, यह अनुमान करना असभव है। फकीरके मुख और आँखोंके ऊपर थोड़ेसे साधारण उत्कंठित कौतूहलकी छाया अवश्य पड़ी है किन्तु और भी थोडा-सा मन लगाकर देखनेसे ही देख पड़ता है कि इसकी आडमें जो चित्त विराजमान है, वह जैसा शान्त, वैसा ही उद्वेगरहित और वैसा ही निर्भय है। उन्हींके पीछे आकर पोड़शी खडी हो गई। उसके गेरुए वस्त्र, उसके सारे सुन्दर सुगठित खुले हुए सिरपर रूखा बिखरा हुआ केशभार, उसके उपवाससे कठिन और यौवनसे भरे हुए शरीरकी सब प्रकारके बाहुल्यसे रहित अद्‌भुत सुषमा तथा सबके ऊपर उसके झुके हुए नेत्रोंकी अदृश्य वेदनाका अनुक्त इतिहास—इन सब चीजोंने एक साथ मिलकर क्षणभरके लिए साहबको अभिभूत कर डाला।

उनका यह विमुग्ध आच्छन्न-भाव फकीर साहबकी एक बातके धक्केसे दूर हो गया और साथ ही साथ अपनी इस मानसिक दुर्बलतासे अकारण लज्जित होकर फकीर साहबकी बातके जवाबमें वह खामखाँ रूढ़ (कर्कश) हो उठा। फ़कीर साहबने अपनी प्रथाके अनुसार अभिवादन करके जब पूछा—बाबू साहब,

शिरोमणिने उसका सारांश निकालकर कहा—क्या खाक अच्छे हैं! मुसलमान और सिद्ध पुरुष! वह सव कुछ नहीं है, मगर वह किसीकी भी बुराई या हानि नहीं करता। वारुई नदीके किनारे एक वर्गदके पेड़के नीचे अड्डा है, वहुत दिनोंसे है—वीच-वीचमें कहीं चला जाता है और फिर आ जाता है। दो सालसे नहीं था, फिर सुना है कि पाँच-छ दिन हुए, लौट आया है। शायद उसीकी सलाहसे ताले तोड़े गये हैं। कुछ कहा नहीं जा सकता—हजार हो, म्लेच्छ ही तो है!

दामादने पूछा—लेकिन आज कैसे आ गये?

तारादास अव तक चुप ही था, अवकी वोला। कहने लगा—उस पारके उस वर्गदके पेड़ और उसके आसपासकी सव जमीन चण्डी माताकी है। इसीसे जान-पहचान है। फकीरसाहव षोडशीको वहुत चाहते हैं, जब वह यहाँ होते हैं तब षोड्शी अक्सर उनके यहाँ जाया करती है। देखा है, उनसे पढती-लिखती भी है।

जमाई वावूने ठट्ठेके तौरपर कहा—चाहते हैं! विद्या-चर्चा भी चलती है! इन फकीरसाहवकी उम्र क्या है?

तारादासने लज्जित होकर कहा—जी, वह एक वूढे आदमी हैं। अवस्था साठ-वासठसे कम नहीं। 'मा' कहते हैं। एक वार षोड्शी वहुत वीमार हो गई थी—लगभग मर ही चुकी थी—इन्होंने ही उसे अच्छा किया था। साहव वोले—ओह! यह वात है! उधर भी साधु-फकीर हैं, इधर भी डाकिनी-योगिनी! इन सव भैरव-भैरवीयोंके दलको किन्तु वात पूरी नहीं कर पाये, एकाएक पत्नीके चेहरेके एक हिस्सेपर आँख पड़ जानेसे यह असयत वेहूदी वात उसी जगह रुक गई। और किसीने इसमें अपनी वात नहीं जोड़ी, केवल अप्रतिहतगति शिरोमणि महाशय निवृत्त नहीं हुए। अपराधका वाकी अश दमके साथ सपूर्ण करते हुए कह उठे—एक सौ वार भैयाजी, एक सौ वार। ये सव पाखडी साले-साली जैसे नष्ट वैसे ही भ्रष्ट हैं!

उन्होंने इतना कहकर अपने दाहिने-वाऐं नजर डालकर जान पड़ता है, कमसे कम जोगेन भाडे और मित्तिर भैयाके सिर हिलानकी प्रत्याशा की। किन्तु अवकी वे भी चुप रहे और द्वारकी आड़में खड़ी हुई हैमवतीका सूखा हुआ मुह एक क्षणके लिए एकदम लाल हो उठा।

ठीक इसी समय भैरवीको साथ लेकर उस पाखंडी मुसलमान फ़कीरने धीरे धीरे

पैर रखते हुए आँगनमें प्रवेश किया। किसीको भी इसमें संशय नहीं रहा कि शिरोमणिके जोर गलेसे कहे हुए शब्द उन्होंने सुन लिये हैं।

जल्दी ही जब दोनों पास ही सामने आकर खड़े हो गये, तब किसीके भी मुँहसे सहसा कोई बात नहीं निकली। जरा-सी अभ्यर्थना या बैठनेको कहनेका साधारण शिष्टाचार भी नही। अथ च मन-ही-मन सभी जैसे विशेष रूपसे कुछ चंचल हो उठे। शिरोमणि तकको जान पड़ने लगा—जैसे कुछ ठीक नहीं हुआ—जैसे कोई भारी त्रुटि हो गई। अथ च सभी वैसे ही बैठे रहे। मिस्टर बसु साहबके लिए दोनों ही आगन्तुक बिल्कुल अपरिचित थे। दो-तीन मिनट तीक्ष्ण दृष्टिसे वह बार-बार सिरसे पैर तक दोनोंको निहारते रहे। फ़कीरसाहबके सिरके बालोंसे लेकर लम्बी दाढी-मूछतक सभी कुछ एकदम बर्फ़की तरह सफ़ेद था। शरीरपर साधारण मुसलमान फ़कीरकी पोशाक थी। आम तौरसे जो देखा जाता है, उससे अधिक कुछ नहीं, अथ च जान पड़ता है, इस सबल सुदीर्घ देहके ऊपर यह सब जैसे अपनी साधारणताको बहुत ऊपर नॉघ गया है। उनके शरीरका रग जलमें भीगकर और धूपमें झुलसकर ऐसा एक तरहका हो गया है कि वह पहले कैसा था, यह अनुमान करना असभव है। फकीरके मुख और आँखोंके ऊपर थोड़ेसे साधारण उत्कंठित कौतूहलकी छाया अवश्य पड़ी है किन्तु और भी थोडा-सा मन लगाकर देखनेसे ही देख पड़ता है कि इसकी आड़में जो चित्त विराजमान है, वह जैसा शान्त, वैसा ही उद्वेगरहित और वैसा ही निर्भय है। उन्हींके पीछे आकर षोडशी खडी हो गई। उसके गेरुए वस्त्र, उसके सारे सुन्दर सुगठित खुले हुए सिरपर रूखा बिखरा हुआ केशभार, उसके उपवाससे कठिन और यौवनसे भरे हुए शरीरकी सब प्रकारके बाहुल्यसे रहित अद्भुत सुषमा तथा सबके ऊपर उसके झुके हुए नेत्रोंकी अदृश्य वेदनाका अनुक्त इतिहास—इन सब चीजोंने एक साथ मिलकर क्षणभरके लिए साहबको अभिभूत कर डाला।

उनका यह विमुग्ध आच्छन्न-भाव फकीर साहबकी एक बातके धक्केसे दूर हो गया और साथ ही साथ अपनी इस मानसिक दुर्बलतासे अकारण लज्जित होकर फकीर साहबकी बातके जवाबमें वह खामखाँ रूढ (कर्कश) हो उठा। फकीर साहबने अपनी प्रथाके अनुसार अभिवादन करके जब पूछा—बाबू साहब,

क्या आपने बुला भेजा था? तब बाबू साहबने उत्तर दिया—तुमको नहीं बुला भेजा है—तुम जा सकते हो।

मगर फकीरने क्रोध नहीं किया। जरा हँसकर षोडशीको दिखाकर शान्त स्वरमें कहा—लेकिन असामीको मैंने ही हाजिर किया है बाबू साहब। वह तो आना ही नहीं चाहती थी। इसके लिए निहायत दोष भी नहीं दिया जा सकता, क्योंकि सभी जहाँपर बाजारका-सा शोरगुल करें, वहाँ विचारके बदले अविचार ही अधिक होता है। और वह भी सवेरे एक बार पूरा हो चुका है। लेकिन आपका नाम सुनकर मैंने कहा—चलो मा, हम लोग चलें। वह आईन-कानूनके जाननेवाले हैं, और फिर बाहरके हैं—अगर संभव हुआ तो सुमीमांसा ही करेंगे।

बैरिस्टरसाहबने समझ लिया कि फकीरके सम्बन्धमें उन्होंने गलत धारणा नहीं की। यह चाहे जो हों, अपढ-अशिक्षित साधारण भिखारियोंकी श्रेणीके नहीं हैं। अतएव प्रत्युत्तरमें उनको भी कुछ थोड़ा-सा भलामानुस बनना पड़ा। बोले—ये लोग तो ताला तोड़ने और अनधिकार-प्रवेश करनेके लिए इनको पुलीसके सिपुर्द कर जेल करा देना चाहते हैं। और सुना कि आपके हुक्मसे ही ताले तोड़े गये हैं।

फकीरने हँसकर कहा—अरे बापरे! केवल अपराधी ही नहीं, उसके साथ अपराधमें सहायता करनेवाला भी! लेकिन बाबू साहब, मैंने सिर्फ ताला तोड़नेकी ही सलाह दी है, कानून तोड़नेका परामर्श नहीं दिया। वह घर देवोत्तर सम्पत्ति है और मा भैरवी ही उसकी अभिभाविका हैं। तारादास अगर खामखाँ ताले बन्द न करते, तो अच्छे-अच्छे ताले इस तरह तोड़कर नष्ट न करने पड़ते। फिर तारादासकी ओर देखकर कहा—तारादास, यह सलाह तुमको किसने दी बाबा? लेकिन जिसने भी दी हो, अच्छी सलाह नहीं दी।

तारादास इसका उत्तर नहीं दे सका और अन्य किसीको भी जब कोई बात कहनेको न सूझ पड़ी, सब चुप ही रहे, तब शिरोमणिने आडम्बरके साथ अपनी जगहसे उठकर कहा—उसे भैरवी किसने बनाया था, जानते हैं फकीरसाहब? इसी तारादासने। अब वह अगर उसे न रखना चाहे तो यह उसकी इच्छाकी बात है। यही मेरा मत है।

फकीरसाहवने कहा—शिरोमणि महाशय, यह सच है कि मत भी आपका है, और इच्छा भी तारादासकी है, लेकिन मुशकिल यह है कि जायदाद और आदमीकी है और वह आदमी इन दोनोंमेंसे किसीसे भी सहमत नहीं है। वताइए, क्या करिएगा!

उनके उत्तर और कहनेके ढंगसे वैरिस्टर साहवने हँस दिया और कहा—इन लोगोंकी नालिश यह है कि वर्तमान भैरवीने जो अपराध किया है, उससे उन्हें देवीकी सेवायत होनेका अधिकार विलकुल नहीं रहा। वह इसकी कुछ सफाई दे सकती हैं क्या? यह कहकर उन्होंने षोड़शीके झुके हुए मुखकी ओर एक वार कनखियोंसे देख लिया।

फकीर साहवने कहा—उन्हे असामीकी हैसियतसे ही आप लोगोंके सामने खड़ा किया है। उसपर फिर अपराधको अप्रमाणित करनेका वोझ ढोनेको भी उनसे अनुरोध करूँ, इतना वड़ा जुल्म तो मुझसे न हो सकेगा वावूसाहव।

वैरिस्टरसाहव मन-ही-मन लज्जित होकर चुप हो रहे, किन्तु शिरोमणिने तीखी तेज आवाजसे प्रश्न किया—जमींदार जीवानन्द चौधरीने जो भैरवीको प्यादा भेजकर पकड़ मँगाया था और रातभर अपने पास रोक रक्खा था, सो तो हम सभी जानते हैं। फिर क्यों उसने सवेरे मजिस्ट्रेट साहवके आगे झूठा वयान दिया कि वह अपनी इच्छासे वहाँ गई थी और जमींदार वीमार हो गया था, इसीलिए सारी रात अपनी इच्छासे ही वहाँ रही? वह अगर निष्पाप है तो इस वातका जवाव दे।

फकीर साहवने जवाव दिया—जमींदारके अनाचार और अत्याचारसे उत्तेजित होकर क्रोधकी हालतमें वह आप ही गई थी, यह वात तो झूठ नहीं है शिरोमणि महाशय? और वह जो अचानक वहुत ज्यादह अस्वस्थ हो गये थे, यह घटना भी सच है।

जनार्दन राय अव तक चुपचाप ही वादानुवाद सुन रहे थे। अव वह वरदाश्त न कर सके। वोल उठे—यही अगर सच हो फकीरसाहव, तो अपने वापके विरुद्ध खडे होकर उस अत्याचारी वदमाशको वचानेका क्या प्रयोजन था? वह वीमार हो गये थे तो इसको क्या पड़ी थी? वीमारीमें सेवा करनेके लिए तो वीजगाँवका जमींदार पालकी भेजकर ले नहीं गया था? सार यह कि हम उसे

अब नहीं रक्खेंगे, हम भीतरका रहस्य जानते हैं। इसके सिवा उसे अगर कुछ कहनेको है तो उसीको कहने दीजिए। आप मुसलमान हैं, विदेशी। आपको हिन्दूधर्मके मामलेमें बीचमें पड़कर मध्यस्थ बननेकी जरूरत नहीं।

उनकी बातोंकी कटुता और तीक्ष्णता कुछ देर तक जैसे उस बैठकखाने भरमें व्याप्त होकर गूँजने लगी। बैरिस्टरसाहब खुद भी जाने कैसे एक प्रकारसे अशान्त और अप्रतिभ हो उठे। और वाक्यहीना भैरवीके निस्तब्ध हृदयके भीतर भी कोई एक उत्तर बाहर निकलनेके लिए बारबार जोर मारने लगा। षोडशीके चेहरेपर इसीके चिह्न फकीरसाहबने पल-भरमें अनुभव कर लिये और वे सिर्फ थोड़ा-सा मुसकराये। इसके बाद जनार्दन रायको लक्ष्य करके हँसते हुए मुखसे बोले--रायमहाशय, बात बहुत दिनोंकी है, आपको शायद याद नहीं है— मंदिरके दक्षिणमें जो वह बूढ़ा नीमका पेड़ है, उसीके नीचे तब मैं रहता था। षोड़शी तब जरा-सी बच्ची थी, तभीसे मैं उसे मा कहकर पुकारता हूँ। मुसलमान होकर भी जो गलती कर डाली है, उसके लिए आज मुझे माफ करना होगा। उसी माकी इतनी बड़ी विपत्तिमें भला मैं बिना आये रह सकता हूँ? मा तो कोई तुच्छ वस्तु नहीं है? यह न होता तो आज ही सबेरेके समय जब आपने उसीके मुँहसे उसकी माकी लज्जाकी कहानी कहलवानी चाही थी, तब अपनी उस बेटीकी डाँट खाकर आप इस तरह विह्वल और व्याकुल न हो पड़ते। यह कहकर फकीरसाहबने दरवाजेसे लगकर मूर्तिकी तरह स्थिर खड़ी हुई हैमवतीको इशारेसे दिखा दिया।

हतबुद्धि जनार्दन रायको सहसा कोई उत्तर खोजे नहीं मिला। बोले—ये सब फिजूल बातें हैं।

फकीरसाहबने वैसे ही हँसते हुए चेहरेसे कहा---पका हुआ बीज भी पत्थरके ऊपर पड़कर फिजूल या बेकार हो जाता है, अपनी इतनी उम्रमें यह मैं जानता था। मैं कामकी बात भी कहता हूँ। उस महा पापिष्ट जमींदारको मेरी यह मा क्यों बचाने गई, यह मैं भी नहीं जानता। पूछकर भी जवाब नहीं पाया। मुझे विश्वास है कि उसका कारण था, आप लोगोंका विश्वास है कि वह कारण बुरा है। यहाँपर मातंगिनी भैरवीकी बात उठा सकता था, लेकिन एकका भला करनेके लिए भी अन्यकी निन्दा करनेका हम लोगोंके धर्ममें निषेध है, इसीसे मैं

वह नजीर पेश न करूँगा। लेकिन मुझे आपसे बहुत कुछ कहना है राय महाशय। यह झगड़ा अगर केवल तारादासके ही साथ होता तो मैं शायद बीचमें पड़ने न आता, लेकिन आप लोग—खासकर आप खुद कमर बाँधकर षोड़शीके खिलाफ किस लिए खड़े हुए हैं, सुनूँ तो? अकेली षोड़शी ही तो नहीं है, और भी अनेक स्त्रियाँ हैं। गाँवकी छातीके ऊपर बैठकर वह आदमी जब एकके बाद एक रातोंको लोगोंका मान और इज्जत लूट रहा था, तब कहाँ थे यह शिरोमणि और कहाँ थे जनार्दन राय? वह जब गरीबोंका सर्वस्व शोषण करके पाँच हजार रुपए वसूल कर ले गया, तब आपने उनका कितना हृदयका रक्त, उनकी जमीन-जमा, घर-बार गिरो रखकर जुटाया है, जरा सुनूँ? किन्तु रहने दीजिए राय महाशय, आपकी लड़की और दामाद यहाँ खड़े हैं, उनकी आँखोंके सामने आपके पापोंका भंडाफोड़ और नहीं करूँगा।

इतना कहकर वह मुसलमान फकीर चुप हो रहा, किन्तु उसके उक्त निदारुण अभियोगका अंतिम वाक्य जैसे समाप्त होकर भी समाप्त नहीं हुआ, गूँजता ही रहा। किसीके मुँहसे कोई शब्द नहीं, निकला, सारा बैठकखाना स्तब्ध हो रहा—केवल एक तीव्र कंठकी झंकार जैसे बार-बार चारों ओरकी दीवारोंसे टकरा-टकराकर ‘धिक् धिक्!’ करने लगी।

हैमवतीने किसीकी ओर नजर तक नहीं डाली। चुपचाप सिर नीचा किये अन्यत्र चली गई, और बैरिस्टर उसी जगह अपनी कुर्सीपर स्तब्ध होकर बैठे रहे।

फकीर साहबने भैरवीको लक्ष्य करके कहा—चलो मा, हम लोग चलें। यह कहकर, और दूसरी कोई बात न कहकर, वह षोड़शीको साथ लेकर चल दिये। आँगनके बाहर आकर देखा, सदर दर्वाजेके एक किनारे हैम खड़ी है। उसकी दोनो आँखोंमें आँसू भरे हुए हैं। वही अश्रु-सजल दृष्टि फकीर साहबके मुखकी ओर उठाकर उसने कहा—बाबा, मेरे पतिको आप माफ कर दीजिए।

फकीरने विस्मित होकर कहा—क्यों मा?

हैमवतीने इसका उत्तर न देकर कहा—अपने पतिको लेकर मैं अगर आपके आश्रममें आऊँ तो आप दर्शन देंगे?

अबकी फकीर साहब हँस दिये। उसके बाद स्निग्ध कण्ठसे बोले—मिलूँगा क्यों नहीं मा? तुम दोनों जनोंका निमन्त्रण रहा। समय मिले तब आना।

९

पोड़शी अच्छी तरह जानती थी कि मन्दिरसम्बन्धी झगड़ा वहींपर मिटकर समाप्त नहीं हो गया है। किन्तु विपत्तिने जिस दिशासे फिर आक्रमण किया, वह बिल्कुल समझके बाहर थी--उसे उसने कभी सोचा भी न था। यहाँ रहनेपर फकीर साहब बीच-बीचमें इस तरह आते अवश्य थे, लेकिन अभी कल ही शामको वह गये हैं, और बीचमें केवल एक ही दिन बीता है, तब आज ही तड़के आकर उपस्थित हो जायँगे---ऐसा उनका कभी नियम नहीं रहा। षोड़शी अभी अभी स्नान करके नित्यकर्म करनेके लिए घरके भीतर जा रही थी कि बेवक्त अचानक उन्हें देखकर चिन्तित हो गई। चटपट प्रणाम करके एक आसन बिछाकर उसने उद्विग्न स्वरमें पूछा--इतने सवेरे ?

फकीर साहबने बैठकर थोड़ा हँसनेकी चेष्टा करके कहा--फकीर आदमी हूँ, संसारके सुख-दुःखकी विशेष पर्वाह नहीं करता मा। तो भी कल रात अच्छी तरह सो नहीं पाया। षोड़शी, देह धारण करनेकी ऐसी ही विडंबना है। न जाने कब यह मिट्टीके नीचे जायगी!

पोड़शीने किसी शारीरिक पीड़ाकी बात सोचकर कहा--तबियत खराब हो गई है क्या ?

फकीरने गर्दन हिलाकर कहा—नहीं, शरीर मेरा ठीक ही है। कल तीसरे पहर ये सभी लोग मेरी कुटीमें पधारे थे। साथमें जमाईबाबू भी थे, एककौड़ी भी था। उसे मैं अच्छी तरह जानता हूँ, यही कुशल है, नहीं तो उसने तो बहुत-सी बातें कहीं, तो भी दो-एक बातोंके बारेमें तुमसे पूछे बिना भी मैं नहीं रह सका मा।

पोड़शीने कहा—पूछिए।

फकीर साहबने कहा—देखो मा, मैं मुसलमान हूँ, तुम लोगोंके देवी-देवताओंके सबधमें मुझे कौतूहल (जिज्ञासा) रखना उचित नहीं है, रखता भी नहीं,—किन्तु तुमको मैं मा कहकर पुकारता हूँ तुमने क्या यह कहा है कि अब कभी अपने हाथसे चडीकी पूजा नहीं कर सकूँगी।

पोड़शीने सिर हिलाकर जताया कि यह बात सच है।

फकीरने कहा—लेकिन इतने दिनतक तो तुमको यह रुकावट नहीं थी ? इसके उत्तरमें षोड़शी जब मौन रही, तब उन्होंने कहा—जो लोग तुमको नहीं चाहते, वे अगर तुम्हारे इस नये आचरणके लिए बुरा ख्याल जाहिर करें तो उसका तो कोई जवाब नहीं दिया जा सकता षोड़शी ?

इसका भी कोई अच्छा जवाब देनेकी चेष्टा न करके षोडशी जब वैसे ही चुप रही, तब फकीर साहबका मुख भी अत्यन्त गंभीर हो उठा। उन्होंने खुद भी कुछ देर चुप रहकर कहा—इसका कारण कहने लायक होता तो तुम निश्चय ही मुझसे कहतीं। इसके सिवा एककौड़ीने और भी एक बात कही। उसने कहा—जमींदार बाबूने बड़ी आशा की थी कि तुम उनके साथ जाओगी। यहाँतक कि वे और एक पालकी मँगाकर जानेमें देर करते रहे। उन्हें अन्ततक यह भरोसा था कि शायद तुम लौट आओगी।

अबकी षोडशी बोली। उसने कहा—उनकी आशा और भरोसेके लिए भी क्या मुझे जिम्मेदार होना होगा ?

फकीर साहबने फौरन सिर हिलाकर कहा—निश्चय ही नहीं। लेकिन बात सुननेमें भी भोंडी है न, इसीसे उल्लेख कर दिया। अच्छा मा, जिस घटनासे इन सब कुत्सित बातोंकी सृष्टि हुई है, उसका यथार्थ कारण क्या तुम मुझसे भी नहीं कह सकतीं ? उस आदमीको तुमने क्यों इस तरह बचा दिया, इसकी कोई मीमांसा भी तो खोजे नहीं मिलती षोडशी ?

षोडशीका पहले मन हुआ कि इस प्रश्नका भी कोई उत्तर न दे, किन्तु वृद्धके उद्विग्न मुख और स्नेह-करुण आँखोंकी ओर देखकर वह चुप न रह सकी। बोली—फकीर साहब, उस बीमार आदमीको जेल भिजवाना ही क्या उचित होता ?

फकीर विस्मित हुए, जान पड़ता है, मन ही मन कुछ नाराज भी हुए। बोले—यह विचार करनेका भार तो तुम्हारे ऊपर नहीं है मा, यह काम राजाका है। इसीसे उनके जेलखानोंमें भी अस्पताल हैं, बीमार अपराधीका भी सरकार इलाज कराती है। अगर यही हुआ हो तो कहना होगा, तुमने अन्याय किया।

षोडशी उनके मुँहको ताकती रही। फकीरने कहा—जो होना था सो हो गया, लेकिन आइन्दा यह गल्ती सुधार लेनी होगी।

षोडशीने उनके मुँहकी ओर ताककर कहा—इसका मतलब ?

फकीरने कहा—यह तो तुम जानती हो कि इस आदमीके अपराध और अत्याचार बेशुमार है, उसको सजा मिलनी चाहिए।

अबकी षोडशी बहुत देर तक निस्तब्ध बैठी रही। उसके बाद सिर हिलाकर धीरे-धीरे बोली—मै सब जानती हूँ। उन्हें दण्ड देना ही शायद आप लोगोंके लिए उचित है। लेकिन मेरी बात किसीसे कहनेकी नहीं है। मै उनके खिलाफ गवाही कभी न दे सकूँगी।

फकीरने कहा—बात क्या है षोडशी ?

षोडशी सिर नीचे झुकाये स्तब्ध हो रही। बहुत देर तक दोनोंमेंसे किसीके मुँहसे कोई बात नहीं निकली। दासी घरका कामकाज करने आई थी। दर्वाजेके पास उसे देख पाकर फकीरसाहब अपनेको सँभाल कर धीरेसे बोले—अच्छा तो अब मै चलता हूँ।

षोडशीने झुककर उन्हें प्रणाम किया। वह धीरे-धीरे बाहर हो गये।

केवल उनके प्रशान्त मुखकी गहरे विषादकी छाया ही षोडशीको दिनभर सभी कामोंके बीच जब-तब नहीं याद आने लगी, बल्कि जिस वाक्यको उन्होंने मुँहसे निकलनेके पहले ही सहसा रोक लिया और चुपचाप चले गये, वह भी अनेक आकारों और अनेक छन्दोंमें उसके कानोंमे बजने लगा। षोडशी मानो स्पष्ट देखने लगी कि इस साधु व्यक्तिने जो श्रद्धा, जो स्नेहका भाव इतने दिन उसपर रक्खा था, ठीक कुछ न जानकर भी उसे आज वह मानो कुछ छोटा करके ले गये है। यह कितनी बड़ी क्षति है, उसके परिमाणको वही जानती थी, उससे अधिक और कोई नहीं जानता। किन्तु तो भी उसे फिर वापस पानेकी कोई राह उसे नहीं सूझी। उसका बाल्य-कालका इतिहास किसीके आगे प्रकट नहीं किया जा सकता, यहाँतक कि फकीरसाहबके आगे भी नहीं। कारण, उससे जो सब पुराना किस्सा निकल पड़ेगा, वह लड़कीके लिए चाहे जितनी बड़ी लज्जाकी बात हो, किंतु उसकी जो मा आज परलोकमे है, उसको सारी दुनियाके सामने एकदम राहकी धूलमें खींच लाना होगा। और यहींपर तो इसका अन्त नहीं है। भैरवीके लिए पतिका स्पर्श एकदम मना है—निषिद्ध है। कितने जमानेसे यह निष्ठुर अनुशासन देवीकी ये भैरवियाँ मानती चली आ रही है। इसलिए, भला या बुरा जो भी हो, जीवानन्दकी शय्याके [illegible] सिरेपर बैठकर एक रातके लिए भी जिस हाथसे उसकी

सेवा-सुश्रूषा करनी पडी है, उसी हाथसे अब देवीकी सेवा-पूजा नहीं की जा सकेगी, यह निश्चित है। अथ च, इसी जगह, इस देवीके आँगनमें जब तारा-दासने एक अज्ञात-कुल-शील व्यक्तिके हाथमें सौंपा था, तब उसने कोई बात कोई आपत्ति ही नहीं की। और सब जानकर भी वह जो बिना किसी सकोच या हिचकके इतने दिनों तक भैरवीका काम करती आई है, इसकी जवाबदेही आज अगर मारे क्रुद्ध हिन्दू-समाजके आगे उसे करनी पड़े, तो क्या होगा, यह वह सोच भी नहीं सकती। फिर यह सब तो हुई एक तरफकी बात, किन्तु जिस ओर बिल्कुल ही उसके हाथकी बात नहीं है, उधर क्या होगा, उसके बारेमें वह क्या जानती है? जो जीवानन्द एक दिन उसके और अपने विवाहका केवल उपहास कर गया था, वह यदि आज सारे इतिहासको कोरी गप्प कहकर हँसकर उड़ा दे, तो उसे सत्य प्रमाणित करनेके लिए स्वयं उसके सिवा और कोई दूसरा आदमी जीवित नहीं है।

गृहस्थीके बारेमें रानीकी माकी दो-एक बातोंके उत्तरमें षोड्शीने क्या जवाब दिया, उसका कुछ ठीक ठिकाना नहीं। मंदिरके पुरोहितने कोई विशेष आदेश लेनेके लिए आकर अन्यमनस्क भैरवीके निकट क्या हुक्म पाया, यह वह अच्छी तरह समझ ही न पाया। नित्यके नियमित पूजा-आह्निकके लिए बैठकर आज षोड्शी किसी तरह अपने मनको स्थिर नहीं कर पाई। अथ च, जिस बातके लिए उसका सारा चित्त उद्भ्रान्त और चंचल हो रहा, उसका यथार्थ रूप भी उसे पकड़ाई न दिया। केवल कितने ही अस्फुट, अनुच्चारित वाक्योंने ही उसके सारे सवेरेको एक अर्थहीन प्रलापसे अभिभूत आच्छन्न कर रक्खा। रसोईकी तैयारी वैसी ही पड़ी रही। उसने चौकेमें पैर नहीं रक्खा। यह सब उसे अच्छा ही नहीं लगा। इस तरह सारा दिन जब कहीं किस तरह बीत गया, और एक प्रकारकी धुँधली बदलीमें जाड़ेके दिनका पिछला पहला जब बेवक्त ही गाढ़तर हो आने लगा तब षोड्शी अकेले घरके भीतर न रह सकी, एकाएक बाहर निकल आई और फकीर साहबको स्मरण करके बाराई नदीके उसपार उन्हींके आश्रमके लिए चल पड़ी। ऐसा अनेक बार हुआ है कि वह वहाँ जाते समय थोड़ा घूमकर अपने अनुगत विपिन या दिगंबरको उनके घरके सामनेसे पुकारकर साथ ले गई है, किन्तु आज उनकी राह होकर उन्हें पुकारने जानेका साहस भी नहीं हुआ, प्रवृत्ति भी नहीं

हुई। अकेली ही खेतोंके मैदानकी राह पकड़कर नदीकी ओर तेजीसे आगे बढ़ गई। उसे यह खयाल भी न रहा कि सारा घर खुला पड़ा है।

रास्ता अधिक लम्बा नहीं है। शायद एक मीलके भीतर ही है और नदीमें उस समय इतना पानी नहीं था जिसे मजेमें मँझा कर पार न हुआ जा सके। उसीसे अभ्यासवश इसके लिए चिन्तित होनेकी कोई बात ही न थी। केवल लौटते समयका खयाल एक बार मनमें आया, साथ ही जान पड़ता है, भीतर ही भीतर उसे भरोसा था कि अगर सध्या हो गई और अधकार हो ही आया तो फकीरसाहब किसी तरह उसे अकेली न जाने देंगे, कुछ-न-कुछ उपाय कर ही देंगे। मनकी इस अवस्थाने ही उसे जनहीन पथ और उससे भी अधिक निर्जन बालुकामय नदीके तटपर आसन्न सन्ध्या जानकर भी दुविधा नहीं करने दी और बाईके उसपार, सीधे उसी भारी बरगदके वृक्षके तले, उसे फकीरसाहबके आश्रममें, पहुँचा दिया।

वहाँ पहले जिससे भेंट होनेपर वह एकदम हतबुद्धि हो गई, वह फकीरसाहब नहीं, राय महाशयके दामाद बैरिस्टरसाहब थे। आज उनकी पोशाक कोट-पतलनके बदले साधारण भद्र बंगाली पहनावा धोती-कुर्ता-चादर आदि था। वह भी ठीक इसके लिए प्रस्तुत न थे। सहसा यह न सोच पाकर कि क्या करें, शायद केवल अभ्यासवश ही उठकर उन्होंने किसी तरह नमस्कार कर लिया।

भैरवीने एक बार चारों ओर देख धीमे स्वरमें पूछा—फकीर साहब कहाँ है?

बसु साहबने कहा—मुझे भी यही जानना है। शायद पास ही कहीं गये हैं, यह सोचकर मैं भी लगभग एक घटेसे उनकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

भैरवीने सिर हिलाकर धीरे धीरे कहा—वह सन्ध्याके समय कहीं नहीं रहते। जान पड़ता है, आते ही होंगे।

बसु साहबने कहा—मैं भी सुनकर आया हूँ कि यहाँ रहनेपर उनका यही नियम है। लेकिन सध्या हो गई, आसमानके रग-ढंग भी वैसे अच्छे नहीं हैं—यह कहकर उन्होंने सामने मैदानके छोरपर नजर डाली। षोड़शी भी उनकी दृष्टिका अनुसरण करके उधर ही ताकती हुई चुप हो रही। पश्चिम दिशाके छोरपर उस समय काले-काले बादलोंके टुकड़े धीरे-धीरे जमा हो रहे थे। इस निस्तब्ध निर्जन मैदानमें छायाच्छन्न वृक्ष-तलेके घने अन्धकारमें खड़े होकर दोनोंमेंसे

किसीने कुछ क्षणों तक कुछ कहनेके लिए कोई वात न खोज पाई। साथ ही इस विसदृश अवस्थामें दोनों जने जाने कैसे कुछ संकुचितसे हो उठे। जान पडता है, जैसे इस चुप्पीके सकटसे छुटकारा पानेके लिए ही वसु एकाएक कह उठे—कल मैं जा रहा हूँ। नही जानता, जल्दी आना होगा या नहीं, लेकिन फकीर साहवसे और एक वार भेंट किये विना हैमने किसी तरह जाने नहीं दिया, इसीसे . लेकिन वह कहीं चले तो नहीं गये ?—

यह कह कर वसु साहव दो कदम आगे वढ़ गये और नजदीककी कुटियाके सामने आकर भीतर गर्दन वढाकर क्षण-भर उसके भीतर देखनेके वाद वोले—अच्छी तरह देखा नहीं जाता, लेकिन कहीं भी कुछ है—यह भी नहीं जान पड़ता। मुसलमान फकीर धूनी जलाते हैं कि नही, नहीं जानता, लेकिन मालूम पड़ रहा है कि इसी तरहकी कोई चीज कोई पानी डालकर वुझा गया है। जरा आप देखिए तो, मैं और भीतर न जाऊँगा। अगर यह वात है तो निरर्थक अपेक्षा करनेसे कोई लाभ नही। यों कहकर वह षोड़शीकी ओर ताककर लौट आये।

वसु साहवकी वात सुनते ही षोडशीका हृदय जोरसे धडक उठा और फकीर साहवके रहने न रहनेकी परीक्षा विना किये ही उसने निश्चयसे जान लिया कि इस ससारमे उसके जो एक मात्र शुभचिन्तक थे वह आज चुपचाप चले गये और उनके इस नीरव प्रस्थानका कारण जगत्मे उसके सिवा और कोई नहीं जानता। षोडशी यंत्र-चालितकी तरह फकीरकी कुटीमें प्रवेश करके वीचमें स्तब्ध होकर खडी रही। भीतर घुसनेके साथ ही उसने देख लिया था कि कहीं कुछ नहीं है, यह छोटी-सी झोपडी आज एकदम विल्कुल सूनी है, किन्तु तो भी तत्काल ही वह उसके भीतरसे वाहर नहीं आ सकी। उसकी छातीके भीतर केवल यही एक वात अंगारेकी तरह जलने लगी कि वह उसे यथार्थ ही दोषी जानकर उसका त्याग कर गये हैं, और उन्होने इस वातका आभासतक उसे देनेकी जरूरत नहीं समझी। उसी जगह पत्थरकी मूर्त्तिकी तरह निश्चल खडी हो रही। उसके मनमें वहुत-सी वातें आने लगीं। फकीर उसे कितना स्नेह और प्यार करते थे, इस वातको उससे वढकर और कौन जानता है? तो भी विना जाने जो उन्होंने अपराधीका पक्ष लेकर विवाद किया--इसकी लज्जा और ग्लानिने उस सत्याश्रयी सन्यासीको

आज इस तरह चुपचाप स्थान छोड़नेके लिए बाध्य किया है, यह उसने नि:संशय रूपसे अनुभव किया, और जिस वेदनाको लेकर वह चुपचाप विदा हो गये हैं उसके गुरुत्वको समझनेमें भी उसे देर नहीं लगी। अथ च, यह बात उन्हें बतलानेका अवकाश उसे कब मिलेगा, या कभी मिलेगा कि नहीं, यह भी आज भविष्यके गर्भमें सम्पूर्ण रूपसे छिपा हुआ है। इस तरह एक ही भावसे बड़ी देरतक खड़ी रहकर वह सोचती रही और शायद और भी कुछ देर खड़ी रहती, सहसा खुले हुए द्वारसे कुटीके भीतर एक हवाके झौंकेका अनुभव करके उसे होश हुआ--खयाल आया कि बाहर एक आदमी शायद अब भी उसकी प्रतीक्षा कर रहा है। किन्तु इसी बीच आकाश ऐसा मेघाच्छन्न और अन्धकार इतना गहरा हो उठ सकता है—और हवा तेज होकर आँधी-पानीकी संभावना निकटवर्ती हो उठ सकती है, यह खयाल भी उसे नहीं हुआ। बाहर आकर उसने देखा, थोड़ी ही दूरपर एक सूखे पेड़के ठूँठपर बसु साहब बैठे हुए हैं, और उनके सफेद कपड़ोंके सिवा प्राय और कुछ भी नजर नहीं आता। उनको इस तरह वास्तवमें अपेक्षा करते देखकर षोड़शीको मन-ही-मन बड़ा संकोच मालूम पड़ा। साहबने उठकर खड़े होकर कहा—कहाँ, फकीरसाहब तो अभीतक नहीं आये। आपको आशा होती है कि आवेंगे?

षोड़शीने बहुत धीमे स्वरमें उत्तर दिया—क्या जानें। शायद नहीं भी आवें।

बसु साहबने कहा--फकीर साहबकी चीज-वस्तु क्या थी, मैं नहीं जानता, लेकिन उनकी कुटिया तो बिल्कुल खाली है। इस तरह एकाएक चले जाना क्या आपको संभव जान पड़ता है?

षोड़शीने वैसे ही धीरे-धीरे कहा—एकदम असंभव भी नहीं है। इस तरह बीच बीचमें वह एकाएक कहीं चले जाया करते हैं।

बसु साहबने पूछा—फिर कितने दिनमें लौट आते हैं?

षोड़शीने कहा--कुछ ठीक नहीं है। अब भी तो लगभग तीन बरसके बाद लौटकर आये थे।

बसु साहबने कहा--तो फिर चलिए, हम लोग घर लौट चलें।

'चलिए', कहकर षोड़शीके आगे बढ़ते ही बसु साहबने कहा--लेकिन डराता हूँ, जानेका सुयोग तो सोलहों आने हो गया है। एक तो चालके ऊपर

राहका चिह्नमात्र नहीं है, उसपर अंधकार ऐसा गहरा है कि अपने ही हाथ-पैर नहीं देखे जा सकते।

षोड़शीने धीरे धीरे चलना शुरू किया था, वह कुछ नहीं बोली। वसुने कहा—हवाके शोरसे जान नहीं पड़ता, लेकिन पानी गिर रहा है। दरख्तके नीचेसे निकलते ही भींगना होगा। इसपर भी जब षोड़शी कुछ नहीं बोली; तब वसु साहबने कहा—देखिए, मैं रास्ता-घाट कुछ भी नहीं पहचानता। इसके सिवा सुना है, इस तरफ साँप वगैरहका भी बहुत डर है। इस भयानक अन्धकारमें क्या—

षोड़शी रुकी नहीं। चलते चलते ही बोली—रास्ता मैं पहचानती हूँ। आप ठीक मेरे पीछे पीछे चले आइए।

वसु साहब हँसे। बोले—अर्थात् साँपके काटनेकी दुर्घटना अगर हो तो आपहीके सिर बीते। ठीक है। आप सन्यासिनी हैं, यह प्रस्ताव आप कर भी सकती हैं, लेकिन मेरी मुशकिल यह है कि मैं मर्दबच्चा हूँ। जानता हूँ कि आप अवश्य ही यह बात किसीसे नहीं कहेंगी, यहाँतक कि हैमसे भी नहीं। तो भी ठीकसे नहीं चल पाऊँगा।

अबकी षोड़शी ठिठककर खड़ी हो गई। अन्धकारमें दिखाई जरूर नहीं दिया, लेकिन साहबकी बात सुनकर उसके भी मुँहसे हँसी फूट निकली। घड़ीभर चुप रहकर कहा—तो फिर आप किस तरह करनेको कहते हैं?

साहबने कहा—कहना कठिन है। लेकिन सलाह ठीक होनेके पहले ही भींग जायँगे। बरगदके पत्ते वर्षाको नहीं मान रहे हैं।

बात सच थी। कारण, ऊपरके पानीने बूँद बूँद करके पत्तोंसे नीचे गिरना शुरू कर दिया था। षोड़शीने कहा—आप बल्कि उस कुटियाके भीतर कुछ देर अपेक्षा कीजिए, मैं हैमको खबर देकर रोशनी और आदमियोंको भेजनेकी व्यवस्था करा दूँगी। मुझे अभ्यास है, इस पानीसे विशेष हानि नहीं होगी।

साहबने कहा—अत्यन्त मनोरम प्रस्ताव है। कारण, देखता हूँ कि बंगालीके साहब बन जानेपर वह जो हो जाता है, वह आप खूब जानती हैं लेकिन मुझमें अब भी थोड़ी-सी कमी रह गई है। हैमके बीचमें रहनेके कारण मेरे भीतरके

साथ बाहरका अब भी सम्पूर्ण रूपसे एकाकार नहीं हो पाया। इसलिए आपका यह प्रस्ताव भी नहीं चल सकता। इसलिए चलना ही तय है। चलिए।

वृक्षतल छोड़कर बाहर आकर दोनोंने ही समझा कि आगे बढ़ना प्रायः असभव है। कारण, वायुके वेगसे केवल वर्षाकी धारा ही देहमें सुईकी तरह नहीं बिंधती, किन्तु इसके पहले जो सूखी बालूकी राशि ऊपर उड़कर आकाशमें छा गई थी, वह जब तक जलधारासे धुलकर जमीनपर नहीं बैठ जाती, तब तक आँखें खोलकर राह चलना भी दु साध्य है। चुपचाप चलते-चलते षोड़शीने एकाएक पीछे शब्द सुनकर ठिठककर खड़े होकर पूछा—आपके कुछ लग गया क्या?

वसुसाहबने किसी तरह अपनेको सँभालकर सीधे होकर कहा—हाँ, लेकिन जितनेकी प्रत्याशा थी, उससे अधिक नहीं। ऐनक समेत मेरे चार आँखें अवश्य हैं, लेकिन देखनेकी शक्ति उसकी चौथाई भी अगर होती तो मैं बच जाता। चलिए।

षोड़शी चली नहीं, दमभर चुप रहकर उसने धीरेसे पूछा—आप क्या सचमुच ही अच्छी तरह देख नहीं पाते?

वसुने कहा—सचमुच। इसके बाद जरा हँसकर बोले—बहुत-सी अँगरेजी किताबें रटकर साहब हुआ हूँ—उसकी दक्षिणा भी उन्होंने खूब बड़ी ही ली है। लेकिन इसीलिए आप और खड़ी खड़ी भीगिए नहीं, आगे बढ़िए। दोनों आँखें मूँदकर चलनेसे जितना देखा जा सकता है, उतना देख पाऊँगा ही, यह मैं आपको निश्चय भरोसा देता हूँ।

षोड़शीका कण्ठस्वर करुणासे कोमल हो उठा। उसने कहा—तब तो नदी पार होनेमें आपको भारी कष्ट होगा।

वसुसाहबने कहा—सो तो ठीक नहीं जानता। हाँ, यह जरूर है कि नदी पार होनेके पहले भी विशेष आराम नहीं पा रहा हूँ। लेकिन इसीलिए इस मैदानके बीच खड़े रहनेसे भी इस समस्याकी मीमांसा न होगी।

षोड़शीने एक पग आगे बढ़कर कहा—आप मेरा हाथ पकड़कर धीरे-धीरे चले आइए। कहकर उसने अपना हाथ बढ़ा दिया।

इस अपरिचिता नारीका आचरण और साहस देखकर वाक्पटु बैरिस्टर क्षणभरके लिए विस्मयसे निर्वाक् हो रहे। किन्तु वह यही क्षणभरके लिए। उसके बाद

उसी बढे हुए हाथका नि शब्द व्यग्रताके साथ सहारा लेकर उन्होंने धीरेसे कहा—चलिए। अब मै सचमुच ही दोनों आँखें मूदकर चल सकूँगा।

षोडशीने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। दोनों धीरे धीरे कुछ दूर जब आगे बढ गये, तब बसुसाहब अकस्मात् कह उठे—आपके साथ उस दिन मैने अच्छा व्यवहार नही किया। उसके लिए मै आपसे क्षमा माँगता हूँ, आप मुझे माफ कर दें।

षोडशीने इस बातके जवाबमे भी कुछ नहीं कहा, वैसे ही चुपचाप धीरे धीरे चलने लगी। बसु साहबने कहा—आप और हैम बचपनकी सहेली है, मित्र है। मैरा उस दिनका आचरण चाहे जो हो, मुझे भी अपना ठीक शत्रु न समझ लीजिएगा। कहकर उन्होंने षोड़शीके हाथको ज़रा दवाया।

षोड़शी एकदम चुप थी, बसु साहबने आप भी कुछ देर चुप रहकर फिर कहा—ये लोग आपको सहजमें छोड़ देंगे, ऐसा नहीं जान पड़ता। बहुत संभव है, मामला-मुकदमा भी चले। फकीरसाहब शायद सचमुच ही चले गये और मैं भी जान पड़ता है, नहीं रहूँगा—

षोड़शी कुछ नहीं बोली। उन्होंने खुद भी जरा चुप रहकर कहा—आपने खुद जो कहा है कि अब देवताकी पूजा नहीं करेंगी, सो क्या क्रोधके मारे कहा है?

षोडशीने अबकी जवाब दिया—ना।

बसु साहबने पूछा—तो फिर क्या सचमुच ही कोई कारण है?

षोड़शीने इस प्रश्नका उत्तर नहीं दिया, किन्तु कहा—अब हम नदीमें आ गये हैं, आपको जरा सावधानीसे उतरना होगा।

इसके बाद बड़ी देर तक कोई बातचीत नहीं हुई। षोड़शी यत्न और सावधानीके साथ उन्हें नदीके पार ले गई। आते समय साहब जूता उतारकर आये थे, किन्तु इस घने दुर्भेद्य अन्धकारमें फिर नंगे पैर चलनेकी हिम्मत नहीं की। जैसे थे, वैसे ही जूता पहने पहने नदी मँझाकर उस पार पहुँचे। एक तृप्तिकी लम्बी साँस छोड़कर बोले—एक बड़ी भारी अलफ टल गई, बच गया।

इस भारी अलफसे बचकर साहबने अपेक्षाकृत निश्चिन्त होकर कहा—पुजारी एक हैं जरूर, लेकिन पूजा करना आपके भी कामोंमेसे एक काम है। परन्तु उस

प्रश्नको आप टाल गई। इधर जिस भयानक दुर्दान्त शैतान जमींदारको बचाना आपके कर्तव्यका अंग नहीं था, उसे आपने जिस उपायसे बचाया, वह केवल आश्चर्य ही नहीं, अद्भुत भी है। ये दोनों ही बातें ऐसी दुर्बोध्य हैं कि गाँवके लोग न समझें तो उनपर रूठा नहीं जा सकता।

षोड़शीने वैसे ही मृदु स्वरमें इस अनुयोगका जवाब देकर कहा—मैं रूठी तो नहीं हूँ।

वसु साहबने कहा—नहीं रूठीं? यह भी अद्भुत बात है! आपके पिताका आचरण और भी अद्भुत है। हैम कहती है, पर हैमकी बात जाने दूँ। इस समय लेकिन मैं कहता हूँ, इन लोगोंको सारा अपराध समझाकर क्यों नहीं बता देती? उससे कितना लाभ होगा, यह मैं नहीं जानता, लेकिन वह जो भी हो, नारीका सुनाम भी तो अवहेलाकी वस्तु नहीं है।—कहकर वह कुछ देर उत्तरकी राह देखते रहे, किन्तु षोड़शीने जब कोई जवाब ही नहीं दिया, तब एक निःश्वास छोड़कर कहा—समझा, इस नेकनामी और बदनामीके संबंधमें साधारण स्त्रियोंकी तरह आपको कोई विशेष सिर-दर्द नहीं है। और आप साधारण हैं भी तो नहीं। इसके सिवा चुप रहनेकी यह जिद भी अद्भुत है। वास्तवमें आपका सभी कुछ अद्भुत है। यह कहकर वह खुद कुछ देर चुप रहकर बोले—उस दिन केवल एक बार आपको देखा था और आज आपका हाथ पकड़कर चल रहा हूँ। जिनका सहारा लिया है, वह भी मेरे लिए जैसे अंधकार (अस्पष्ट) हैं, वैसे ही जिसके भीतर होकर चल रहा हूँ, वह भी अंधकार है। तो भी निर्भय और निःसंकोच यात्रा करनेमें कोई बाधा नहीं पड़ी, आपको भक्ति किये बिना नहीं रहा जा सकता।

इतना कहकर और कुछ देर षोड़शीकी ओरसे कोई बात सुननेकी प्रत्याशामें रहकर वह एकाएक कह उठे—अच्छा, आप तो सन्यासिनी हैं। मेरे ससुर साहब चाहे जो क्यों न करें, जमीन-जायदादके लिए मामला-मुकदमा करनेकी आपको क्या गरज है?

षोड़शीने इतनी देरमें बात की। कहा—कोई गरज नहीं है।

वसु साहबने कहा—तो फिर?

षोड़शीने कहा—आप कोई आशंका न करें। निरुपाय दुर्बल नारीके भाग्यमें

हमेशासे जो होता आ रहा है, यहो भी उसमें कोई व्यतिक्रम न होगा। इस बातमे जो व्यंग्य था वह बसु साहबको चुभा, किन्तु उन्होंने प्रतिवाद भी नहीं किया और प्रतिघात भी नहीं किया। इसके बाद दोनो ही चुपचाप चलने लगे। आँधी और पानी, कोई भी नहीं थमा अवश्य, किन्तु गाँवके भीतर घुसते ही उसकी तेजी कम हो गई, और रास्तेका मोड़ घूमते ही थोड़ी दूरपर सनातन माइतीकी झोपड़ीकी रोशनी दोनो ही जनोको देख पड़ी। और भी कुछ दूर आगे बढकर षोडशीने ठिठककर खड़े होकर कहा—अब वैसा अँधेरा नहीं है, आप इस राहको पकड़कर सीधे ही चले जाइए तो राय महाशयके दर्वाजेपर जा पहुँचेंगे।

बसु महाशयने पूछा—और आप ?

षोड़शीने कहा—मेरा रास्ता इधर बाईं तरफके बागके भीतरसे है।

बसु साहबने हाथ नहीं छोड़ा। बोले—पराये मुँहसे सुना है, आप बहुत शिक्षित है मैंने खुद जो कुछ जाना है—उसके कहनेकी जरूरत नहीं, किन्तु इससे अधिक जाननेका मौका अगर कभी मुझे नसीब न भी हो, तो आजकी इस यात्राकी याद हमेशा बड़ी श्रद्धाके साथ ही मेरे मनमे बनी रहेगी।

षोडशीने धीरेसे हँसकर कहा—किन्तु केवल इतना ही अगर किसीने बाहरसे देखा हो तो उससे आपका मत नहीं मिलेगा।

साहब मन-ही-मन चौंक पड़े। उसके बाद उस पकड़े हुए हाथको और जरा-सा दबाकर उन्होंने छोड़ दिया और धीरे धीरे कहा—ना। बनाकर कही गई गप्प-सा जान पड़ेगा। इसीसे इसे घँघोलकर गँदला न बना डालकर चुप रहना ही भला है—यही न ?

षोड़शीने इसका जवाब न देकर कहा—मेरे लिए अपेक्षा करके आप बहुत भीगे है, बहुत दु ख-कष्ट पाया है—अब और नहीं। मैं भी चलती हूँ।

बसुने कहा—यही बात शायद मुझे बहुत दिनतक सोचनी होगी। कल हम लोग जा रहे हैं—हैमको क्या कुछ न कहला भेजिएगा ?

षोडशीने दमभर कुछ सोचकर कहा—ना। केवल उसके बच्चेको आशीर्वाद करती हूँ, अगर जी चाहे तो इतनी बात कह दीजिएगा। यह कहकर ही वह और किसी प्रश्न-उत्तरकी अपेक्षा न करके अन्धकारपूर्ण वन-मार्गमें अदृश्य हो गई।

साहब उसी जगह विमूढकी तरह स्तब्ध होकर कुछ देर खड़े रहे। उसे एक

नमस्कार तक नहीं किया गया, जिन फकीर साहबके कारण यह घटना हुई उनके लिए नमस्कार तक नहीं जनाया जा सका। इसके बाद निर्दिष्ट राह पकड़कर वह धीरे धीरे आगे बढ़ गये।

१०

वसुसाहबने जब ससुरके घरमें आकर प्रवेश किया, तब उन्हींके लिए सारे घरमें उत्कण्ठाकी धूम मची हुई थी। घरमें और बाहर जहाँ जितनी समूची और टूटी-फूटी लाल्टेनें थी, सब इकट्ठा की गई हैं, और इस दुर्योगकी रातमे उन सबको काममें आने लायक बनानेकी कोशिशमें घरभरके लोग पसीने-पसीने हो रहे हैं। नौकर-चाकर और आत्मीय अनुगत लोगोंका एक अभियान-दल तैयार हुआ है और राय महाशय खुद उसकी देख-भाल कर रहे हैं। कौन किधर जायेगा, किस रास्ते, किस मैदान, किस वन-जगलमें खोजेगा यह बार-बार बता रहे हैं। उनके आचरण और कण्ठ-स्वरसे केवल चिन्ता और घबराहट ही नहीं, आतक भी प्रकट हो रहा है। यह सच है कि उन्होंने अभीतक प्रकट करके कुछ नहीं कहा है, लेकिन जो भय उनके मनमें झाँक रहा है, वह अत्यन्त भयकर है। वह जानते थे कि षोड़शीके कई अत्यन्त अनुगत किसान और बाग्दी लोग हैं। वे जैसे उद्धत हैं, वैसे ही निष्ठुर। वे डाके डालते हैं, इसलिए पुलीसके रजिस्टरमें उनका नाम-धाम तक लिखा है। वे अगर इस अँधेरी रातमें कहीं अकेला पाकर और यह स्मरण करके कि उनकी भैरवी माताके प्रति अविचार किया गया है, सहसा प्रतिहिंसासे उत्तेजित हो उठे तो वहाँ भी सद्विचारकी आशा करना वृथा है।

हैम एक तरफ चुपकी खड़ी यह सब देख रही थी। पिताकी आशंका भी उसकी दृष्टिसे छिपी नहीं थी। किन्तु उस समय तक वह भीतरकी असल बात नहीं जानती थी। वह जाहिर हुई उसकी माकी बातोंसे। वह सहसा बाहर आकर स्वामीको कड़ा उलाहना देकर कह उठीं—वह दामाद हैं—उन्हे तुम क्यों अपने झगडेमें मध्यस्थ मान बैठे? जिसके हाथमें डकैतोंका दल है, उसे तुम हराओगे? जहाँसे पाओ, मेरे निर्मलको ढूँढकर लाओ, नहीं तो मुझे जिधर सूझेगा, उधर, इस अँधेरेमें निकल पड़ूँगी। यह कहकर रुआसी-सी होकर वह घरके भीतर चली

गई और कुछ देरके लिए बेटी और बाप, दोनों ही वाक्यशून्य विवर्ण मुख लिये स्तब्ध हो रहे।

जनार्दन राय अपनेको सँभालकर सान्त्वना और साहस-सूचक कुछ हैमसे कहने वाले ही थे कि ठीक इसी समय जमाई साहब आँगनमें आकर खड़े हो गये। उनके सारे अगोंसे जल टपक रहा था, कुर्ता-धोती-जूते कीचड़में सने हुए थे। ससुरकी बात मुँहकी मुँहमें ही रह गई। किन्तु दूसरे ही क्षण जिस साहब जमाईका वह यथेष्ट आदर करते और डरते थे, उसीको वह उत्कट प्रबल आनन्दके मारे जो मुहमें आया वही कहकर झिड़कने लगे।

साहबने चुपचाप ऊपर आकर हाथकी टूटी छड़ी रख दी, पैरोंसे खींचकर जूते निकाले और देहपरसे भीगा हुआ कुर्ता उतारा। इसी बीच छोटे-बड़े, ऊँच-नीच, आत्मीय और गैर, सब एक साथ एक ही तरहके प्रश्न करने लगे कि किस तरह यह दुर्दशा हुई और कहाँ हुई?

राय महाशयने प्रकृतिस्थ होकर कहा—अच्छा, यह सब बादको होगा, तुम घरके भीतर जाओ।—बेटी हैम, खड़ी न रहो, जाकर कोई सूखी धोती और कपड़े दो।

घरके भीतर सास, ससुर और जमा हुई कुटुम्बकी स्त्रियोंके प्रश्नके उत्तरमें निर्मलने बतलाया कि वह उस पार फकीर साहबसे भेंट करने गये थे, लेकिन मुलाकात नहीं हुई। वह आश्रममें नहीं हैं।

उसपारके नामसे एक प्रकारकी आतंकसूचक अस्फुट ध्वनि उठी। राय महाशयने विस्मित होकर कहा—उससे मुलाकात करने गये थे! मुझसे कहते तो मैं उसे यहीं बुला भेजता। लेकिन इस अन्धकारमें राह कैसे पहचानी?

निर्मलने कहा—रास्ता पहचाननेकी मुझे जरूरत नहीं पड़ी। अगर पड़ती तो पहचान न पाता।

राय साहबने पूछा—लेकिन लौटे किस तरह?

"एक सज्जन हाथ पकड़कर मुझे घरके दर्वाजे तक पहुँचा गये हैं।"

चारों ओरसे प्रश्न उठा—कौन? कौन? क्या नाम है उनका?

निर्मलने जरा ठहरकर उत्तर दिया—क्या जानें, नाम जाहिर करनेमें शायद उन्हें आपत्ति है।

राय महाशयने प्रतिवाद करके कहा—आपत्ति ? कभी नहीं । हमारे देशके लोगोंको तुम नहीं जानते । लेकिन खैर, वह चाहे जो हो, उसे खुश तो कर ही देना चाहिए । यह कहकर फौरन नौकरको पुकारकर हुक्म दिया कि अरे अधर, अगर चटर्जी बाहर हो तो जाकर अभी कह दे कि कल सवेरे ही पता लगाकर उसे बखशीस दी जाय । पूरा रुपया ही उसके हाथ लगे, उसमेंसे वह कुछ काट-कूट न ले । चटर्जी बड़ा कृपण है न !--यह कहकर उन्होंने उदारताके जोशमें पहले गृहिणीके और फिर बेटी-दामादके चेहरेपर सदय दृष्टि डाली ।

रातको भोजन आदिके उपरान्त एकान्त कमरेके भीतर स्वामीको अकेला पाकर हैमने कहा--बाबूजीने तो इनामकी घोषणा कर दी, पूरा रुपया देनेकी चेष्टा भी शायद कुछ होगी, लेकिन फल कुछ न होगा ।

निर्मलने कहा--ना, असामी नहीं मिलेगा ।

हैमने जरा हँसकर पूछा—लेकिन तुमने उस दयालु आदमीको क्या पुरस्कार दिया ?

निर्मलने कहा--देना क्या तुम इतनी सहज समझती हो ? वह क्या केवल दाताकी मर्जीपर ही निर्भर करता है ?

" तो दे नहीं सके ? "

" ना । देनेकी चेष्टा भी नहीं की । "

हैमने क्षणभर स्वामीका मुँह ताकते रहनेके बाद कहा--किन्तु मुझे देना उचित है । बाबूजी उनका पता नहीं लगा सकेंगे, लेकिन मैं लगा लूँगी ।

निर्मलने सन्देह प्रकट करके कहा--मुझे जान पड़ता है कि अपने पिताकी तरह तुम भी उन्हें नहीं ढूँढ पाओगी ।

हैमने कहा—अगर पाऊँ तो मुझको भी कुछ पुरस्कार देना होगा । खैर, मैंने उनको पहचान लिया है । कारण, तुम जैसे अंधे आदमीको जो इस भयानक अन्धकारमें बिना किसी विघ्न-बाधाके नदी पार कराकर घरके ठीक सामने तक पहुँचा जा सकते हैं, अथच अपनेको जाहिर नहीं करते, उन्हें पहचान सकना कुछ कठिन नहीं है । इसके सिवा सन्ध्याके अन्धकारमें छिपकर मैं भी एक बार उनसे मिलने गई थी । जाकर देखा, घरद्वार खुला पड़ा है, वह नहीं हैं । वह अन्य नहीं है, लेकिन तारादास ठाकुर सबपर दखल किये बैठे हैं । छिपकर

चुपकेसे भाग आई। रास्तेमें एक जान-पहचानके आदमीसे भेंट हो गई। वह बोला, उसने षोडशीको सीधे नदीकी राहपर जाते देखा है। अब समझे कि जो दयालु आदमी तुमको यहाँ पहुँचा गया है, उसे मै पहचानती हूँ। लेकिन क्या सचमुच ही हाथ पकड़कर वह तुम्हे यहाँ छोड़ गई हैं?

निर्मलने क्षणभर सोचकर सिर हिलाकर कहा--सचमुच यही बात है। जिस घड़ी उन्हे निश्चय हो गया कि मै अन्धेके समान हूँ, उसी घड़ी बिना किसी संकोचके उन्होने मेरी ओर हाथ बढाकर कहा—मेरा हाथ पकड़कर आइए।--लेकिन किसी गैर आदमीके लिए यह काम तुम न कर सकतीं।

हैमने अत्यन्त सहजमें स्वीकार करके कहा—ना।

उसके पतिने कहा--सो मै जानता हूँ।

इसके बाद किस तरह क्या हुआ, सब घटना, एक एक करके वर्णन करके निर्मलने कहा--अथ च इसके अलावा मेरे लिए और क्या उपाय था, नहीं जानता। फिर उधर उनकी विपत्तिका भारीपन जरा एकबार सोचकर देखो। मुझे वह सामान्य ही जानती थी और वह भी शायद भला हूँ, ऐसा नहीं जानती थीं। तो भी मुझे ही जो वह निर्जन अँधेरे मार्गसे ले आई, इसकी जिम्मेदारी कितनी अशोभन, कितनी भयंकर है! असलमे राह चलते-चलते मुझे अनेक बार डर लगा है कि अगर किसीके सामने पड जाऊँ तो उसकी नजरमें यह कैसा दिखेगा। देखो हैम, तुम लोगोंकी देवीकी इस भैरवीको मैं पहचान नहीं पाया, यह सच है लेकिन इतना आज निश्चय ही समझ गया हूँ कि इनके संबंधमें विचार करते समय साधारण नियम नहीं चल सकते। या तो सतीत्व जिसे कहते है वह चीज इनकी दृष्टिमें एक बिलकुल ही फिजूल चीज है—तुम लोगोंकी तरह उसके यथार्थ रूपको यह नहीं पहचानतीं, और नहीं तो इसका सुनाम दुर्नाम इन्हें छू भी नहीं सकता।

हैमने दमभर चुप रहनेके बाद कहा--तुम क्या जमींदारवाली घटनाको सोचकर ही यह सब कह रहे हो?

निर्मलने कहा—आश्चर्य नहीं। यह औरत भली है या बुरी, मै नहीं जानता, लेकिन यह बात हलफ करके कह सकता हूँ कि यह जैसी गम्भीर है, वैसी ही शिक्षित और वैसी ही निःशंक। शास्त्रमे कहा है कि

सात पग एक साथ चलनेसे बन्धुत्व हो जाता है। इतनी लम्बी राहमें इस दुर्भेद्य घने अन्धकारमें बिल्कुल उन्हींका सहारा लेकर हम अनेक पग एक साथ चले आये हैं, एक-एक करके अनेक प्रश्न भी पूछे हैं, किन्तु कल भी वह जैसे रहस्यसे ढकी हुई थीं, आज भी वैसी ही रह गई।

हैमने कहा—तुम्हारी जिरहको भी नहीं माना और बंधुत्व भी नहीं स्वीकार किया ?

निर्मलने कहा—ना, कुछ भी नहीं हुआ।

हैम अबकी हँस पड़ी। बोली—तनिक भी नहीं ? तुम्हारी ओरसे भी नहीं ?

निर्मलने कहा—इतनी बड़ी बात सिर्फ चकमा देकर मुँहसे निकलवा लेना चाहती हो ? लेकिन हैम, अपनेको जाननेमें भी तो देर लगती है। किन्तु बात कह डालकर ही वह ठिठक गया। निहारकर देखा, हैम भी उसकी ओर दोनों आँखोंकी स्थिर दृष्टि बिछाए है। उसके चेहरेपर क्या भाव प्रकट हुआ, यह दीपकके स्वल्प प्रकाशमें ठीक समझमें न आया और वह खुद भी अपनी पूर्वोक्त बातके सिलसिलेसे जोड़कर एकाएक क्या कहे—यह सोचकर ठीक करनेके पहले ही हैमवतीने धीरेसे कहा—सो तो ठीक है। तो भी मर्दोंको समझनेमें हो सकता है कुछ देर ही हो, किन्तु स्त्रियोंको ऐसा ही अभिशाप है कि मरते दमतक अपने भाग्यको समझनेमें ही उनकी उम्र बीत जाती जाती है।—अच्छा, तुम सोओ, मै अभी आती हूँ।— कहकर वह और कोई बात होनेके पहले ही उठ खड़ी हुई, और सावधानीसे दर्वाजा बंदकर बाहर चली गई।

निर्मलने उसका हाथ नहीं पकड़ा—दिल्लगीकी आड़में स्त्रीके इस अर्थहीन संशय और अविचारकी वेदनाने उसे अकस्मात् जैसे क्रोधसे अस्थिर कर डाला। सामनेकी बड़ी घड़ीमें अत्यन्त क्लेशकर मिनटकी सुई खिसकते-खिसकते नीचे पहुँच गई, किन्तु तबतक भी जब वह लौटकर न आई, तब वह और अकेला शय्यापर पड़ा न रह सका और उठकर, उसने धीरेसे दर्वाजा खोलकर बाहर आकर देखा, अंधकारमय बरामदेमें एक खंभेके पास हैम चुपचाप बैठी है। पास आकर, माथेपर और देहपर हाथ रखकर देखा, वर्षाके छींटोंसे सब भीग गया है। उसने हाथ पकड़कर भीतर लाकर कहा—तुम क्या पागल हो गई हो हैम ?

इससे अधिक और कुछ उसके मुँहपर नहीं आया, आनेकी जरूरत भी नहीं समझी। दीपककी रोशनीमें हैमवतीके मुखकी ओर देखा, तो आँसुओंका आभास उसकी आँखोंके कोनोंसे उस समय तक मिटा नहीं था।

११

सवेरे उठकर हैम अपने रातके व्यवहारको स्मरण करके लज्जासे जैसे मर गई। निर्दोष और सच्चरित्र स्वामीके प्रति इस अकारण रुठनेके उत्पातको उसने आँधी-पानी और दुर्योगके बीच उनके अकस्मात् लापता हो जानेके आतंकके ही सिर मढ़कर, मन-ही-मन हँसना चाहा, किन्तु वह जो पूरी तौरसे जी खोलकर उन्मुक्त हँसी हमेशा हँसा करती है और जिसका उसे चिरकालसे अभ्यास है, वह आज उसे किसी तरह नहीं आई। आँखोंमें पड़ी किरकिरी निकल गई, यह समझकर भी उसकी दोनो आँखोंने जैसे किसी तरह निःशंक होना नहीं चाहा। शिरोमणि महाशय खुद आकर यात्राका शुभ मुहूर्त्त बतला गये हैं—साढे दस किसी तरह न बजने पावें, इसीके भीतर यात्रा हो जानी चाहिए। उसकी माँ भंडार-घरमें यात्राकी तैयारी और रसोईघरमें भोजनकी व्यवस्था करनेमें अत्यन्त व्यस्त है, दमभरकी फुरसत नहीं है, इसी समय बाहरकी बैठकसे बुलावा आया कि राय महाशय कन्याको बुला रहे हैं। हैमने बाहर आकर देखा, जैसे कोई उत्सव हो रहा है। पिता फर्शके ऊपर हुक्का हाथमें लिये बैठे हैं। शिरोमणि महाशय हैं, जमींदारका गुमाश्ता एककौड़ी नंदी है, तारादास है, और भी कई गण्य-मान्य व्यक्ति हैं। उसके स्वामी बैरिस्टर साहब भी एक किनारे चुपके बैठे हैं। उत्साह और आनन्दके जोशमें सभीने एक साथ खबर हैमको सुनानेकी चेष्टा की, किन्तु क्या कहा, पहले कुछ भी समझमें न आया। शिरोमणि महाशयके मुँहमें एक भी दाँत नहीं है, लेकिन आवाज है। उस आवाजकी विपुल शक्तिने दमभरमें ही और सबको रोककर जो जाहिर किया, वह इस प्रकार है—कल भयानक दुर्योगकी रात्रिमें बहुत बड़ा काम कर डाला गया है—बिना किसी विघ्नके शत्रुपुरी हाथमें आ गई है। भैरवी घरमें न थी। गुप्तचरके मुँहसे खबर पाकर तारादासने उसी बीचमें उस लड़कीको ले जाकर सब कुछ दखल कर लिया है। विवाद करना तो दूर रहा, डरके मारे

वह (षोडशी) एक शब्द भी नहीं बोली, कुछ भी नहीं कहा, मामूली-सी कुछ चीजें लेकर रातको ही बाहर निकल गई है और प्राचीरके बाहर मंदिरसे मिला हुआ जो छप्पर पड़ा है, जिसमें दूरसे आनेवाले कोई कोई यात्री रसोई बनाते-खाते हैं, उसमें आश्रय लिया है। यह सब माता चण्डीकी कृपा है और यह कृपा और थोड़ी बढ़ते ही उसे गाँवसे निकाल बाहर कर देना भी कुछ कठिन काम न होगा।

उत्फुल्ल तारादासने ऊपरकी ओर एक बार दृष्टिपात करके विनयकी हँसीके साथ कहा—यह सभी मैयाका काम है, जो करनेका था, वह कर दिया, नहीं तो इतनी बड़ी राई-बाघिन एकदम भेड़ा बन जाती! तमाखू चिलममें भरकर फूँक मार ही रहा था और लड़की पास बैठी चाय बनाकर छान रही थी, इसी समय कहींसे भीगती-भीगती वह (षोडशी) आकर हाजिर हुई। हम लोगोंको देखकर डरके मारे जैसे एकदम काठ हो गई। दमभर बाद धीरे-धीरे बोली—बापू, मैंने तो कभी कहा नहीं कि तुम जाओ, या यहाँ न रहो। तुम खुद गुस्सा होकर चले गये और न जाने कितनी तकलीफ उठाई!

मैंने कहा—हु—

दर्वाजेके ऊपर आकर बोली—इस घरमें क्या तुमने ताला डाल दिया है बापू?

मैंने कहा—हु—डाल दिया है। क्या करेगी, कर।

चुप रहकर फिर बोली—तुम्हारे साथ मैं कुछ भी नहीं कहूँगी बापू, तुम लोग रहो। सिर्फ कोठरी जरा खोल दो। मैं दो-एक धोती और कपड़े ले लूँ।

मैंने खोल दीया। माता चंडीकी दयासे उसने और कोई दंगा-फसाद नहीं किया। पहननेकी दो धोती, एक कंबल और एक लोटा लेकर अँधेरेमें ही भीगते-भीगते दूर हो गई। माको साष्टांग दण्डवत करके बोला—मा, बालकपर इसी तरह दया बनी रहे। तेरा नाम लिये बिना मैं कभी जलग्रहण नहीं करता।

शिरोमणिने हाथ हिलाकर कहा—रहेगी! बनी रहेगी! मैं कहता हूँ तारादास, मा मुँह उठाकर देखेंगी—नहीं तो उनका जगदंबा नाम ही वृथा हो जायगा।

एककौड़ीने कहा—लेकिन ठाकुर, चाहे जो कहो, माताकी गद्दी कभी खाली नहीं रह सकेगी। अपनी इस लड़कीको नई भैरवी बनानेमें देर करनेसे भी काम न चलेगा, यह मैं कहे रखता हूँ!

राय महाशयने जला हुआ हुक्का पासके आदमीके हाथमें देकर बड़ी गम्भीरताके साथ कहा—होगा, सब होगा, मै सब ठीक कर दूँगा, तुम लोग घबराओ नहीं।

फिर दामादकी ओर देखकर कहा—क्यों भैया, उस छोकरीके हाथसे दो लाइन लिखा लेना भी तो चाहिए न ? चाहिए क्यों नहीं ! वह भी होगा। यहाँ बुलाकर थोड़ा धमकाकर यह भी मैं करा लूँगा। लेकिन यह भी कहे रखता हूँ तारादास कि कड़मतलाकी उस जमीनके लिए हंगामा करोगे तो ठीक न होगा। धानकी आदत अपनी आँखोंके सामने उठा लाये बिना मैं चारों ओर निगाह नहीं रख पाता ! वहाँ मेला लगता है—कहकर, षोड़शीकी तरह झगड़ा करनेसे फिर—

बात उन्हें पूरी भी नहीं करनी पड़ी। बहुतसे लोग ही तारादासकी तरफसे राजी हो गये और तारादास खुद भी दाँतोंसे जीभ काटकर, गद्गद कण्ठसे कह उठा—ऐसी बात जबानपर भी न लाना राय महाशय, आप ही का तो सब है ! हाथीके साथ मच्छड़का झगड़ा ! क्यों न बिटिया ?—यह कहकर उसने एक अच्छी-बात, या थोड़ासा गर्दन हिलाना अथवा ऐसा ही कुछ सुननेकी प्रत्याशासे हैमके मुँहकी ओर देखा और उसीके साथ बहुतोंकी नजर हैमके ऊपर जा पडी। हैम कुछ नहीं बोली, परन्तु उसका चेहरा देखकर वही षोड़शीके पहले विचारका दिन ही चटसे सबको स्मरण हो आया, जिससे एक निरुत्साहके मेघने जैसे कहींसे आकर पलभरके लिए बैठकखानेके भीतर अपनी छाया डाल दी—किन्तु वह क्षणभरको ही। राय महाशय सीधे होकर बैठ गये और तमाखूके लिए एक बार जोरसे हाँक मारकर बोले—भैया निर्मल, शिरोमणि महाशयने दस बजेके भीतर ही यात्राका मुहूर्त बताया है। औरतोंका मामला ठहरा—जरा पहले तैयार न होनेपर घरसे निकला ही न जायगा।

निर्मल गर्दन हिलाकर उठ खड़ा हुआ और, और कुछ कहनेके पहले ही हैमवती भी चुपकेसे बाहर हो गई।

हाथ-मुँह धोनेसे लेकर स्नान तक करनेमें वसुसाहबको अधिक देर नहीं लगी। घरके भीतर पैर रखते ही सासका ऊंचा गला रसोई-घरसे सुनाई पडा। वह लड़कीको ले बैठी है। वह कमरेके भीतर क्या कर रही है, यह उनकी समझहीमें नहीं आ रहा है। निर्मलने कमरेके भीतर देखा, हैम फर्शके ऊपर स्तब्ध होकर

है। आश्चर्यमें आकर पूछा—मामला क्या है, जो तुम्हारी मा वहुत वकझक रही हैं? इसके सिवा समय भी तो अधिक नहीं है।

ैमने कहा—वहुत समय है। आज तो हम लोगोंका जाना नहीं हो सकता।

नेर्मलने पूछा—क्यों?

ैमने कहा—क्यों क्या? षोड़शीकी इतनी वड़ी विपत्तिमें उससे एक वार मिले -ही चली जाऊँगी?

नेर्मलने कहा—अच्छा तो जाकर मिल ही न आओ। उसके लिए भी तो । है।

ैमने कहा—और तुमही एक वार भेंट किये विना किस तरह जा सकोगे?

ाह वही पिछली रातकी प्रतिक्रिया है—यह मन ही मन समझकर निर्मलने —चेष्टा करनेसे जान पड़ता है, यह भी किया जा सकेगा। यह कोई असभव सख्त काम नहीं है। लेकिन मेरे एक वार मुलाकात करके जानेसे ही इस त्तेमें उसे कुछ सुविधा होगी, यह तो नहीं जान पड़ता।

ैमने वडे जोरसे सिर हिलाकर केवल इतना कहा—ना, यह किसी तरह होगा।

नेर्मलने कहा—होगा क्यों नहीं? इसके सिवा मेरा वह सैदावादका चमड़ेका दमा है—

ैमने कहा—रहने दो अपना चमड़ेका मुकदमा। एक तार भेज दो। आज ारा किसी तरह जाना न होगा।

निर्मलने कहा—अच्छा तो चलो न, दोनों जनें एकवार मिल आवें? उतना य तो है।

ैमने सिर उठाकर जरा हँसकर कहा—नहीं। यह तुम्हारे वहाँ हो सकता यहाँ नहीं हो सकता। और इतने लोगोंके सामने वावूजी ही क्या समझेंगे? को हम लोग छिपकर चलेंगे।

निर्मलका सचमुच ही वहुत जरूरी मुकदमा था। इसके सिवा किस वहानेसे ा इस तरह एकाएक रोका जा सकता है, यह उसकी समझमें न आया—नकर इससे ससुरके साथ भारी विगाड़ होनेकी सम्भावना है। सोचकर उसने —यह नहीं हो सकता हेम, जाना तो आज हम लोगोंको होगा ही। और

मुझे तो जान पड़ता है कि बीचमें पड़कर हम लोग उनकी विपत्तिको शायद और भी बढ़ा देंगे। मेरी बात सुनो, चलो, बिना माँगी मध्यस्थतासे कल्याणकी अपेक्षा अकल्याण ही अधिक होगा।

हैम आँखें उठाकर कुछ देर तक पतिके मुँहकी ओर स्थिर भावसे ताकती रही। फिर बोली—मुझे तो तुम जानते हो, आज मैं किसी तरह नहीं जा सकूँगी। और कलके अपराधके लिए अगर तुम मुझे दण्ड देना ही चाहो तो मुझे छोड़कर चले जाओ। मैं अब तुमको नहीं रोकूँगी।

निर्मल और कुछ न कहकर बाहर चला गया। शरीर ठीक नहीं है, आज जाना न होगा—यह सुनकर सासजीको आश्चर्य हुआ, उद्विग्न हुईं और उससे भी अधिक प्रसन्न हो उठीं। लेकिन बाहरकी बैठकमें बैठे हुए ससुर महाशय केवल एक बार 'हूँ' कहकर ही हुक्का पीने लगे। उनको आश्चर्य भी नहीं हुआ, उद्वेग भी नहीं हुआ और जिसे थोड़ी भी समझ है वह उनके मुँहकी ओर देखकर खुश होनेकी बात जबानपर नहीं लाया।

मुकदमेकी व्यवस्था करनेके लिए निर्मलने एक तार भेज दिया और उसने मन-ही-मन समझा कि यह काम केवल निरर्थक ही नहीं, बुरा है। लेकिन तो भी उसका वही मन दिनभर बिलकुल ही छिपे छिपे उसी शामके लिए उन्मुख हो रहा। विगत रात्रिका हैमका वह रोना कितना हास्यास्पद था, कितना असंभवकी अपेक्षा भी असंभव था, यह बात दिनभरमें कितनी ही बार उसके मनमें आई है, तथापि उसी एक बूँद आँखोंके पानीने किसी तरह सूखना ही न चाहा और प्रत्येक क्षण ही वह ऐसे ही एक अज्ञात और अचिन्त्य-पूर्व रहस्यकी सृष्टि करने लगा, जिसमें एक साथ ही मधुरता और तिक्तता मिलकर एकाकार होने लगे।

रातके अन्धकारमें भी पिताकी आँखोंसे बचनेका प्रयास निष्फल समझकर हैमवती अपने पति और उसके एक पछाँही नौकरको साथ लेकर जब षोडशीके नये डेरेके दरवाजेपर आकर उपस्थित हुई, तब सन्ध्या नहीं हुई थी। षोडशी एक कम्बलके ऊपर बैठी मन लगाकर एक पुस्तक पढ़ रही थी। सामनेसे जूतोंकी आवाज सुनकर उसने सिर उठाकर देखा और उठ खड़ी हुई। बोली, आइए। आओ दीदी, आओ। और समेटे हुए कंबलको फैलाकर बिछा दिया।

आसनपर बैठकर स्वामी और स्त्री, दोनों कुछ क्षणोंतक चुपचाप देखते रहे। फिर हैमने कहा—दीदीके इस नये घरमें और चाहे जो दोष हो, किन्तु अपव्ययका अपवाद शिरोमणि महाशय, यहाँतक कि मेरे पिताजी तक नहीं लगा सकेंगे। इसी अद्भुत चीजको दिखानेका लोभ देकर ही तो आज इनको मैंने रोक लिया है, नहीं तो मुझको भी लेकर यह दोपहरकी गाड़ीसे चले ही गये थे, और क्या! फिर स्वामीसे कहा—क्यों, यह देखे विना चले जानेसे पछताना पड़ता कि नहीं?

निर्मलने कहा—देखकर भी तो कुछ कम पछताना पड़ेगा, ऐसा नहीं जान पड़ता।

हैमने स्वामीके मुखकी ओर ताककर कहा—सो तो ठीक है। शायद आँखोंसे न देखना ही अच्छा था। इसके वाद षोड़शीके शान्त मलिन मुखके ऊपर अपने दोनों नेत्रोंकी स्निग्ध दृष्टि स्थापित करके कहा—हम लोगोंने सब कुछ सुना है। लेकिन दीदी, तुमने यह पागलपन क्यों किया? इस घरमें तो तुम रह न सकोगी।—आवेग और करुणासे आखिरी बात कहते समय उसका कण्ठस्वर काँप गया। किन्तु षोड़शीके गलेमें इसकी प्रतिध्वनि नहीं ध्वनित हुई। उसने अत्यन्त सहज भावसे कहा—अभ्यास हो जायगा। इससे भी खराव घरोंमें तो कितने ही आदमियोंको रहना पड़ता है वहन। इसके सिवा वापूको वड़ा कष्ट हो रहा था।

हैमने प्रश्न किया—तो आपने सभी कुछ छोड़ दिया?

इसका उत्तर उसके स्वामीने दिया। उसने कहा—उसके सिवा क्या उपाय है, वता सकती हो? सारे गाँवके साथ तो एक असहाय स्त्री दिन-रात झगड़ा करके टिक नहीं सकती। फिर षोड़शीसे कहा—यही अच्छा है। अगर अपनी इच्छासे यहीं रहनेका इरादा आपने किया हो और यह विश्वास कर लिया हो कि इस झोपड़ीमें रहनेका भी अभ्यास हो जायगा, तो ससारमें कुछ भी त्याग करना आपके लिए कठिन न होगा।

षोड़शी मौन ही रही और उसका मुँह देखकर भी उसके मनकी वात समझी न जा सकी। हैमने कहा—तुम सन्यासिनी हो, जमीन-जायदाद छोड़ देना तुम्हारे लिए कठिन नहीं है, झोपड़ीमें भी तुम रह लोगी—यह जानती हूँ, लेकिन इसके साथ जो वदनामी लगी रही, वह भी क्या तुम सह लोगी दीदी?

षोडशीने हँसते हुए मुँहसे क्षणभर चुप रहकर कहा — बदनामी अगर झूठी है तो क्यों न सहन होगी ? सुनो हैम, संसारमें मिथ्या बातोंकी कमी नहीं है; लेकिन उसका प्रतिवाद करनेकी चेष्टामें फिर जो मिथ्या कामकी सृष्टि होती है, उसका गुरुभार नहीं सहा जाता ।

हैमने कहा—किन्तु एककौड़ी नन्दी जो बात और काम दोनों ही मिथ्या बकता फिर रहा है ? स्त्री जातिके जीवनमें वह तो असह्य है ।

षोडशी तनिक भी उत्तेजित न हुई । धीरे-धीरे बोली—मैंने जहाँतक सुना है, एककौड़ीने मिथ्या तो विशेष नहीं कहा । जमींदारबाबू अचानक बहुत सख्त बीमार पड़ गये थे, घरमें और कोई था नहीं,—मैंने उनकी सेवा की । यह तो झूठ नहीं है ।

हैम उद्दीप्त हो उठी । और एक आदमीकी धीरताकी तुलनामें उसका कण्ठस्वर कुछ अनावश्यक तीक्ष्ण सुन पड़ा । उसने कहा—मगर सभी तो सब काम कर नहीं पाते दीदी ? बीमारकी सेवा करनेकी भी तो एक रीति है ?

षोडशीने वैसे ही कोमल स्वरमें कहा—है क्यों नहीं ! किन्तु स्थान और कालको न समझकर केवल बाहरसे रीति स्थिर नहीं की जा सकती हैम ।—आप क्या कहते हैं ? कहकर वह निर्मलकी ओर देखकर जरा हँस दी ।

निर्मलने उस इशारेको पूर्ण रूपसे समझकर कहा—कमसे कम मैं तो इस बातको किसी तरह अस्वीकार नहीं कर सकता । इसके सिवा कामकी रीति सबकी एक नहीं होती,—यही जैसे संन्यासिनीकी ।

स्वामीकी इस उक्तिको हैमने गौर करके नहीं देखा । बोली—भले ही संन्यासिनी हों, लेकिन उनका क्या धर्म नहीं है ? वह क्या नारी नहीं है ? वह घरसे पकड़कर ले गया, परन्तु इन्होंने कह दिया कि यह खुद गई थीं । इस झूठकी क्या जरूरत थी ? उसकी बीमारी तो केवल उसके अपने ही दोषसे थी । तो भी इतने बड़े घोर पापीको बचानेकी आपको क्या आवश्यकता थी ? इसपर भी अगर लोग संदेह करें, तो क्या यह उनका दोष है ?

स्त्रीकी बातें सुनकर निर्मल क्षुब्ध और लज्जित हो उठा । वह जानता था कि हैम उलाहना देने या अभियोग करनेके लिए घरसे नहीं आई थी और घरपर चढ़ाई करके अपमान करे, ऐसी क्षुद्र और हीन वह नहीं है;—वास्तवमें कृतज्ञता

जताकर एक बड़ा-सा भरोसा देनेके लिए ही वह उपस्थित हुई है, किन्तु बातों ही बातोंमें यह सब क्या उसके मुँहसे निकल गया! किन्तु पीछे आत्मविस्मृत होकर और भी कुछ न कह बैठे, इस डरसे वह व्यस्त होकर कुछ कहने ही वाला था, लेकिन उसकी जरूरत नहीं हुई। षोड़शीने हँसकर कहा—तुम्हारे स्वामी कह रहे थे कि संन्यासिनीका धर्म उससे नहीं भी मिल सकता है जो सन्यासिनी नहीं है, यही जैसे इस झोपड़ीके भीतर बिना किसी आश्रयके, धूल और रेतके ऊपर अकेले रहना तुमसे बर्दाश्त न होगा। यह कहकर उसने फिर हँसकर कहा—सचमुच ही मुझे घरसे पकड़कर खींचता हुआ कोई नहीं ले गया, मैं क्रोधकी धुनमें आप ही घरसे निकल पड़ी थी।

निर्मलने कहा—लेकिन आपको गुस्सा है, ऐसा तो नहीं जान पड़ता?

षोड़शीने हँसीको दबाकर केवल इतना ही कहा—है क्यों नहीं। फिर हैमसे कहा—लेकिन वह बहस मैं नहीं करती, सत्य ही मैंने झूठ कहा था। लेकिन वह घोर पापिष्ठ है, इसलिए क्या उसे बचानेका अधिकार भी किसीको नहीं है? तुम्हारे स्वामी वकील हैं, समय मिलने पर उन्हींसे पूछकर देख लेना।

निर्मलने कहा—समयके माफिक साधारण बुद्धिसे कोई जवाब दे भी सकता हूँ, लेकिन वकालती बुद्धिसे तो कुछ भी नहीं खोज पा रहा हूँ।

षोड़शीने कहा—इसके सिवा ऐसा तो हो सकता है कि सज्ञान अवस्थामें होशहवासमें अनेक काम ही वे नहीं करते—

हैमने बाधा देकर कहा—लेकिन इसीलिए क्या अपने बापके खिलाफ भी जाना होगा? यह भी क्या सन्यासिनीका धर्म है?

षोड़शीने क्रोध नहीं किया। हँसते हुए ही कहा—सन्यासिनीके हो या न हो, स्त्रीके लिए कमसे कम ऐसी चीज संसारमें रह सकती है, जो बापसे भी बड़ी है। अगर यह न होता हैम, तो इस टूटी झोपड़ीके भीतर तुम्हारे पैरोंकी धूल ही भला कैसे पड़ती?

हैमने हड़बड़ाकर झुककर षोड़शीके पैरोंकी धूल माथेसे लगाकर कहा—ऐसी बात तुम जबानपर भी न लाओ दीदी। मेरे ससुरको किसी राजाने खिलतमें एक तलवार दी थी, बचपनमें मैं अक्सर उसे खोल-खोलकर देखती थी। म्यान उनकी धूल-मिट्टीने मैली हो गई है, लेकिन असल चीजमें कहीं जरा-सा भी मैल

नहीं लगा। वह जैसी सीधी है, वैसी ही कडी वैसी ही खरी। तुम्हारी ओर देखते ही मुझे उसीकी याद आती है। जान पड़ता है, गाँव भरके सभी लोगोंने गल्ती की है, कोई कुछ भी नहीं जानता। इच्छा करनेपर पलभरमें वह म्यान तोडकर फेंक दे सकती हो। क्यों नहीं फेंक देती दीदी ?

षोडशीने उसका दाहना हाथ खींचकर अपने हाथमें ले लिया और कुछ देर चुप बैठी रही। फिर बोली—आज तुम लोगोंके जानेकी बात थी, फिर जाना क्यों नहीं हुआ ? जान पड़ता है, कल जाओगे ?

हैमने अपने स्वामीको दिखाकर कहा—कल रातको न जाने कौन इनका हाथ पकडकर नदी मैदान प्रान्तर बिना किसी विघ्न-बाधाके पार कराकर घरतक पहुँचा गये हैं। मेरे बाबूजीने उनको पूरा एक रुपया बखशीश देना चाहा है। लेकिन रुपया उनके हाथ नहीं लगेगा, क्योंकि वह उन्हे ढूँढ न पावेंगे। इस अंधे आदमीको इस तरह हाथ पकडकर पहुँचाया न जाता तो क्या होता सो केवल मैं ही जानती हूँ, और मैं ही केवल उनका नाम जानती हूँ। लेकिन रुपया-पैसा तो उन्हे देनेका उपाय नहीं है, इसीसे केवल जरा-सी उनके पैरोंकी धूल लेनेके लिए—यह कहकर हैमने अपना हाथ खींचनेकी जैसे चेष्टा की, वैसे ही षोडशी अपनी पकड़ कसकर केवल जरा-सा हँस दी।

हैमने बाएँ हाथसे अपनी आँखका कोना पोछकर हँसकर कहा—अच्छा पैरोंकी धूल तुमको न देनी पड़ेगी दीदी, जरा अपनी मुट्ठी ढीली करो, मेरा हाथ टूटा जा रहा है। तुम्हारा मन ही नहीं, हाथ भी कुछ कम सख्त नहीं है। ईस्पातकी तलवार क्या यों ही याद आती है! किन्तु यह वचन आज मुझे दो दीदी कि अगर कभी तुमको अपने आदमीकी दरकार हो तो अपनी इस परदेसी बहनको याद करोगी।

षोड़शी उसके हाथके ऊपर धीरे धीरे हाथ फेरने लगी, कुछ बोली नहीं।

हैमने कहा--तो वचन देना नहीं चाहतीं ?

षोड़शीने कहा—मैं क्या यह चाह सकती हूँ बहन कि मेरे लिए तुम्हारा पिताजीसे झगड़ा हो ?

निर्मलने कहा--झगड़ा न करके भी तो बहुत चीजें की जाती हैं ?

षोडशीने कहा--मैं कहती हूँ, वह भी आप लोगोंको चेष्टा करनेकी जरूरत नहीं। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि मैं प्रवासी बहनको भी भूल जाऊँगी। मेरी खबर आप लोग पाते रहेंगे।

नौकर अबतक चुपकर बाहर बैठा था। उसने कहा--माजी, कलकी तरह आज भी आँधी-पानी आ सकता है--बादल उठ रहे हैं।

हैमने बाहर झाँककर देखा, फिर प्रणाम करके षोडशीके पैरोंकी धूल लेकर उठ खड़ी हुई। निर्मलने हाथ उठाकर नमस्कार करके कहा--मैं चिरदिन ऋणी ही रह गया, ऋण चुकानेकी अब कोई राह नहीं रही। मैं अदालतका आदमी हूँ, विषय-सम्पत्तिवाली भैरवीके काम तो कभी आ भी सकता था, किन्तु झोपड़ीमें रहनेवाली सन्यासिनी मेरे हाथके बाहर है। यह सच है कि सब छोड़े बिना भी उपाय नहीं था, किन्तु छोड़कर भी उपाय होगा--यह भरोसा नहीं होता।

षोड़शी उठ खड़ी हुई। बोली--किसने कहा कि मैंने सब छोड़ दिया? मैंने तो कुछ भी नहीं छोड़ा।

निर्मल और हैम, दोनों अवाक् होकर एक साथ कह उठे--छोड़ा नहीं? कोई भी अधिकार नहीं छोड़ा?

षोड़शीने वैसे ही शान्त सहज स्वरमें कहा--ना, कुछ भी नहीं। मैं औरत हूँ, निरुपाय हूँ, लेकिन मेरा भैरवीका अधिकार तिलभर भी शिथिल नहीं हुआ। वे मर्द लोग हैं, उनके जोर है, लेकिन उनका यह जोर सोलहों आने प्रमाणित किये बिना मेरे हाथसे वे कुछ भी नहीं पा सकते--मिट्टीका एक ढेला तक नहीं।--निर्मल बाबू, मैं औरत हूँ सही, लेकिन जिन्होंने वही मेरा बड़ा अपराध स्थिर कर रक्खा है, उन्होंने भूल की है। उनके इस भ्रमका संशोधन करना ही होगा।

बात सुनकर दोनों ही जने स्तब्ध हो रहे। घरमें उस समय भी दिया नहीं जलाया गया था--अंधकारमें उसके मुख, उसकी आँखों और उसके क्षीण शरीरकी अस्पष्ट ऋजुताके सिवा और कुछ भी नहीं नजर आया, किन्तु उसके उस शान्त अविचलित कण्ठ-स्वरने भी जो मिथ्या आस्फालन उद्गीर्ण नहीं किया, वह उन दोनोंके ही मर्मस्थलको जोरसे वेध गया।

थोड़ी ही दूर पर, राहके मोड़के पास, एक शोर-गुलसा सुन पड़ा। आगे और पीछे कई एक लाल्टेनोंके प्रकाशके साथ दो पालकियाँ जा रही थीं।

अंधकारमें नजर दौड़ाकर, निर्मलने कहा—तो आज ही जमींदारबाबूने यहा पदार्पण कर दिया, देखता हूँ।

षोडशी भीतरसे विस्मयके साथ कह उठी—जमींदार बाबू? क्या उनके आनेकी खबर थी? यह कहकर वह दर्वाजेके पास आ खड़ी हुई।

निर्मलने कहा—हाँ, उनका वह जो नदी किनारेका नरक-कुण्ड है, उसकी झाड़पोंछ हो रही थी। एककौड़ी कह रहा था कि तन्दुरुस्ती ठीक करनेके लिए हुजूर आज-कलके भीतर ही स्वराज्यमें पधारेंगे। सो पधारे जान पड़ते हैं।

षोड़शी चुपचाप उसी जगह खड़ी रही। विदा माँगकर निर्मलने धीरे-धीरे कहा—चाहे जितनी दूर हम रहें, हमारे रहते आप अपनेको एकदम निरुपाय और बेमहारे न समझें।

इतना कहकर वह हैमका हाथ पकड़कर अन्धकारमें आगे बढ़ा। षोडशी वैसी ही स्थिर, वैसी ही स्तब्ध हो रही, इस बातका भी कोई जवाब नहीं दिया।

१२

उस विशालकाय मंदिरकी प्राचीरके तले जमींदार जीवानन्द चौधरीकी दोनों पालकियाँ पल भरमें ही अन्तर्द्धान हो गईं। इस अत्यन्त गहरे अन्धकारमें केवल कई लाल्टेनोंकी रोशनीकी सहायतासे मनुष्यकी आँखोंसे कुछ भी नहीं देखा गया; किन्तु षोडशीको जान पड़ा जैसे उस आदमीको दिनकी तरह स्पष्ट देख पाया। और खाली वही नहीं, उनके पीछे पर्देके घेरसे ढकी हुई जो पालकी गई, उसके अवरोधके भीतर भी जो आदमी चुपचाप बैठा है, उसकी भी साड़ीकी जो चौड़ी काली पाढ़ कुछ खुले हुए द्वारकी फाँकमेंसे नीचे लटकी हुई है, वह भी जैसे उसकी आँखोंने देख लिया। उसके हाथमें तछी हुई चूड़ीकी सुनहली चमक भी लाल्टेनकी रोशनीमें पल भरके लिए जो झलक गई, इस बारेमें भी उसे संशय नहीं रहा। उसके दोनों कानोंमें हीरेके बुंदे झलमला रहे हैं, उसकी उँगलीकी अँगूठीमें पन्नेका हरा रंग दमक रहा है,—सहसा उसकी कल्पना बाधा पाकर थम गई। उसे याद आया कि यह सब तो उसने अभी अभी हैमके शरीरमें देखा है। याद आते ही

अकेले उस अंधकारमें भी वह लज्जासे सिकुड़ गई। "चंडी! चंडी!" कहकर उसने सामनेके मंदिरके उद्देश्यसे चौखटपर सिर रखकर प्रणाम किया और सारी चिन्ताको बलपूर्वक मनसे दूर करके दर्वाजा छोड़कर जैसे भीतर आकर खड़ी हुई, वैसे ही और दो नर-नारियोंकी चिन्तासे उसका हृदय परिपूर्ण हो उठा। क्षणभर पहलेकी सारी बातचीतके भीतर भी आँधी-पानीके शीघ्र आनेकी संभावना उसके मनको झकझोर गई है। ऊपर काले-काले मेघ-खंडोंसे आकाश छाया जा रहा है, शायद दुर्योगकी उन्मत्तता जल्दी ही शुरू हो जायगी। विगत रात्रिका आधाएक दुःख तो उसके सिरके ऊपरसे गुजर गया है, बाकी रात भी मंदिरके बंद द्वारपर खड़े खड़े किसी तरह बीत गई है। इस प्रकार शारीरिक क्लेश सहनेका उसे अभ्यास नहीं है। देवीकी भैरवीको तो यह सब भोगना भी नहीं होता तो भी उसे उसका विशेष दुःख न था। जो घर, जो घर-द्वार वह अपनी इच्छासे अपने अभागे पिताको दान कर आई है, उसके संबंधमें आज दिन-भर उसने कोई चिन्ता ही नहीं की। किन्तु इस समय एकाएक उसका सारा मन जैसे एकदम व्याकुल हो गया। इस निर्जन गाँवके छोरपर अकेले इस टूटे-फूटे सीलनसे भरे घरके भीतर किस तरह उसकी रात कटेगी? अपने आसपास निहार कर देखा। धीमे दीपकके प्रकाशमें घरके उधरके दोनों कोने धुँधले हो रहे हैं, और उन्हींमें बीच बीच चूहोंके बिल जैसे कालीकाली आँखें खोले ताक रहे हैं। उन्हें भरकर बंद करना होगा। सिरके ऊपर छप्परमें असंख्य छेद है। क्षणभर बाद पानी बरसना शुरू होनेपर हजार धाराओंसे पानी पड़ेगा, खड़े रहनेको भी कहीं जगह नहीं रहेगी। मजदूर बुलाकर इस सबकी मरम्मत करानी होगी। किवाड़ोंको बन्द करनेका खटका निहायत पुराना और जीर्ण है, उसे ठीक करानेकी जरूरत सबसे पहले है। दिन रहते इधर ध्यान नहीं दिया, यह सोचकर उसका कलेजा शंकासे धड़क उठा। इस अरक्षित और परित्यक्त पर्णकुटीमें—केवल आज भर ही नहीं—बहुत दिन वह कैसे रहेगी? उसे याद आया, अभी विदाके समय निर्मलने जो कहा था, उसके उत्तरमें उसकी ओरसे कुछ भी नहीं कहा गया, अथ च अब शायद जल्दी मुलाकात नहीं होगी। वह भरोसा देकर अपनेको एकदम निरुपाय न सोचनेके लिए कह गया है। शायद हजारों कामोंके बीच अपनी यह बात उसे याद ही नहीं रहेगी। याद रही भी तो पश्चिमके किसी बहुत दूर शहरमें बैठकर वह उसकी

सहायता करेगा भी कैसे और उसे मैं ग्रहण ही किस अधिकारसे करूँगी? फिर हैमकी याद आई। जानेके समय उसने एक बात भी नहीं कही, किन्तु स्वामीके बुलानेपर जब उसका हाथ पकड़कर वह आगे बढ़ी तब स्वामीकी मानो हरएक बातका चुपचाप अनुमोदन कर गई। अतएव स्वामी भूल तो भूले भी सकता है किन्तु स्त्री उस बातको—जिसे उसने उच्चारण नहीं किया—सहजमें नहीं भूलेगी, यह षोड़शीने मन-ही-मन विश्वास किया।

हैमके साथ उसका परिचय बहुत दिनोंका नहीं है और घनिष्ठ भी नहीं है। फिर भी किसी तरह दर्वाजा बंद करके वह जब अपना कंबलका बिछौना फैलाकर जमीन पर बैठी, तब हैम उसे बार-बार याद आने लगी। वह जो उसने पहले दिन ही अयाचित रूपसे उसके दुःखमें हिस्सा लेकर गाँवकी समस्त विरोधी शक्तिके विरुद्ध पिताके विरुद्ध, जान पड़ता है और भी एक आदमीके विरुद्ध गोपन युद्ध किया था, उसके चले जानेपर कल उसके पास उसका पक्ष लेकर खड़ा होनेको यहाँ और कोई नहीं रहेगा। प्रतिकूलता उत्तरोत्तर बढ़ती ही चली जायगी, किन्तु अपना कहनेको, एक सान्त्वनाका वाक्य मुँहसे निकालनेको कोई आदमी नहीं मिलेगा। और यह तूफान कहाँ जाकर किस तरह निवृत्त होगा, इसका भी कोई ठिकाना नहीं है। इसी तरह इस बान्धवहीन जनहीन घरमें चारों ओरके घने अंधकारमें अकेली बैठकर वह निकट-भविष्यकी सुनिश्चित विपत्तिके चित्रको रत्ती-रत्ती करके देख रही थी, किन्तु इसी बीचमें कब अनजानमें ही इस परिपूर्ण उपद्रवकी आशंकाको हटाकर क्षणभरके लिए एक अपरिज्ञात भावकी लहर उसके विक्षुब्ध चित्तके भीतर बहुत ऊँची हो उठी, वह जान भी नहीं पाई। इतने दिन तक उसने जीवनको जिस तरहसे पाया है, उसी तरहसे ग्रहण किया है। वह चण्डीदेवीकी भैरवी है—उसकी एक जिम्मेदारी है, अधिकार है, सम्पत्ति है, विपत्ति है—स्मरणातीत कालसे इस पदकी अधिकारिणियोंके पैर पड़ते-पड़ते जो मार्ग बन गया है, वह कहीं तंग है, कहीं चौड़ा है, वह राह चलनेमें कोई सीधी चली गई है और किसीके टेढ़े पदचिह्न परम्परासे चले आ रहे इतिहासके अंक (गोद) में विद्यमान हैं। उस इतिहासके बिना लिखे हुए पन्ने लोगोंकी जबानपर कहीं तो सदाचारकी पुण्य पवित्र कहानीसे चमक रहे हैं और कहीं व्यभिचारकी ग्लानिसे काले हो रहे हैं।

अकेले उस अधकारमें भी वह लज्जासे सिकुड़ गई। "चंडी! चडी!" कहकर उसने सामनेके मंदिरके उद्देश्यसे चौखटपर सिर रखकर प्रणाम किया और सारी चिन्ताको वलपूर्वक मनसे दूर करके दर्वाजा छोड़कर जैसे भीतर आकर खड़ी हुई, वैसे ही और दो नर-नारियोंकी चिन्तासे उसका हृदय परिपूर्ण हो उठा। क्षणभर पहलेकी सारी वातचीतके भीतर भी आँधी-पानीके शीघ्र आनेकी संभावना उसके मनको झकझोर गई है। ऊपर काले-काले मेघ-खंडोंसे आकाश छाया जा रहा है, शायद दुर्योगकी उन्मत्तता जल्दी ही शुरु हो 'जायगी। विगत रात्रिका आधाएक दु ख तो उसके सिरके ऊपरसे गुजर गया है, वाकी रात भी मदिरके वद द्वारपर खड़े खड़े किसी तरह बीत गई है। इस प्रकार शारीरिक क्लेश सहनेका उसे अभ्यास नहीं है। देवीकी भैरवीको तो यह सव भोगना भी नही होता तो भी उसे उसका विशेप दु ख न था। जो घर, जो घर-द्वार वह अपनी इच्छासे अपने अभागे पिताको दान कर आई है, उसके सवधमें आज दिन-भर उसने कोई चिन्ता ही नहीं की। किन्तु इस समय एकाएक उसका सारा मन जैसे एकदम व्याकुल हो गया। इस निर्जन गाँवके छोरपर अकेले इस टूटे-फूटे सीलनसे भरे घरके भीतर किस तरह उसकी रात कटेगी? अपने आसपास निहार कर देखा। धीमे दीपकके प्रकाशमें घरके उधरके दोनों कोने धुँधले हो रहे हैं, और उन्हींमें वीच वीच चूहोंके बिल जैसे कालीकाली आँखें खोले ताक रहे हैं। उन्हें भरकर वद करना होगा। सिरके ऊपर छप्परमें असंख्य छेद हैं। क्षणभर वाद पानी वरसना शुरू होनेपर हजार धाराओंसे पानी पड़ेगा, खड़े रहनेको भी कहीं जगह नहीं रहेगी। मजदूर बुलाकर इस सवकी मरम्मत करानी होगी। किवाड़ोंको वन्द करनेका खटका निहायत पुराना और जीर्ण है, उसे ठीक करानेकी जरूरत सवसे पहले है। दिन रहते इधर ध्यान नहीं दिया, यह सोचकर उसका कलेजा शकासे धड़क उठा। इस अरक्षित और परित्यक्त पर्णकुटीमें—केवल आज भर ही नहीं—वहुत दिन वह कैसे रहेगी? उसे याद आया, अभी विदाके समय निर्मलने जो कहा था, उसके उत्तरमें उसकी ओरसे कुछ भी नहीं कहा गया, अथ च अव शायद जल्दी मुलाकात नहीं होगी। वह भरोसा देकर अपनेको एकदम निरुपाय न सोचनेके लिए कह गया है। शायद हजारों कामोंके वीच अपनी यह वात उसे याद ही नहीं रहेगी। याद रही भी तो पश्चिमके किसी वहुत दूर शहरमें वैठकर वह उसकी

सहायता करेगा भी कैसे और उसे मैं ग्रहण ही किस अधिकारसे करूँगी ? फिर हैमकी याद आई। जानेके समय उसने एक बात भी नहीं कही, किन्तु स्वामीके बुलानेपर जब उसका हाथ पकड़कर वह आगे बढ़ी तब स्वामीकी मानों हरएक बातका चुपचाप अनुमोदन कर गई। अतएव स्वामी भूल तो भूले भी सकता है किन्तु स्त्री उस बातको—जिसे उसने उच्चारण नहीं किया—सहजमें नहीं भूलेगी, यह षोडशीने मन-ही-मन विश्वास किया।

हैमके साथ उसका परिचय बहुत दिनोंका नहीं है और घनिष्ठ भी नहीं है। फिर भी किसी तरह दर्वाजा बंद करके वह जब अपना कंबलका बिछौना फैलाकर जमीन पर बैठी, तब हैम उसे बार-बार याद आने लगी। वह जो उसने पहले दिन ही अयाचित रूपसे उसके दु:खमें हिस्सा लेकर गाँवकी समस्त विरोधी शक्तिके विरुद्ध पिताके विरुद्ध, जान पड़ता है और भी एक आदमीके विरुद्ध गोपन युद्ध किया था, उसके चले जानेपर कल उसके पास उसका पक्ष लेकर खडा होनेको यहाँ और कोई नहीं रहेगा। प्रतिकूलता उत्तरोत्तर बढती ही चली जायगी, किन्तु अपना कहनेको, एक सान्त्वनाका वाक्य मुँहसे निकालनेको कोई आदमी नहीं मिलेगा। और यह तूफान कहाँ जाकर किस तरह निवृत्त होगा, इसका भी कोई ठिकाना नहीं है। इसी तरह इस बान्धवहीन जनहीन घरमें चारों ओरके घने अंधकारमें अकेली बैठकर वह निकट-भविष्यकी सुनिश्चित विपत्तिके चित्रको रत्ती-रत्ती करके देख रही थी, किन्तु इसी बीचमें कब अनजानमें ही इस परिपूर्ण उपद्रवकी आशंकाको हटाकर क्षणभरके लिए एक अपरिज्ञात भावकी लहर उसके विक्षुब्ध चित्तके भीतर बहुत ऊँची हो उठी, वह जान भी नहीं पाई। इतने दिन तक उसने जीवनको जिस तरहसे पाया है, उसी तरहसे ग्रहण किया है। वह चण्डीदेवीकी भरवी है—इसकी एक जिम्मेदारी है, अधिकार है, सम्पत्ति है, विपत्ति है—स्मरणातीत कालसे इस पदकी अधिकारिणियोंके पैर पड़ते-पड़ते जो मार्ग बन गया है, वह कहीं तग है, कहीं चौड़ा है, वह राह चलनेमें कोई सीधी चली गई है और किसीके टेढे पदचिह्न परम्परासे चले आ रहे इतिहासके अंक (गोद) में विद्यमान हैं। इस इतिहासके विना लिखे हुए पन्ने लोगोंकी जबानपर कहीं तो सदाचारकी पुण्य पवित्र कहानीसे चमक रहे हैं और कहीं व्यभिचारकी ग्लानिसे काले हो रहे हैं।

अकेले उस अंधकारमें भी वह लज्जासे सिकुड़ गई। "चंडी! चंडी!" कहकर उसने सामनेके मंदिरके उद्देश्यसे चौखटपर सिर रखकर प्रणाम किया और सारी चिन्ताको बलपूर्वक मनसे दूर करके दर्वाजा छोड़कर जैसे भीतर आकर खड़ी हुई, वैसे ही और दो नर-नारियोंकी चिन्तासे उसका हृदय परिपूर्ण हो उठा। क्षणभर पहलेकी सारी बातचीतके भीतर भी आँधी-पानीके शीघ्र आनेकी संभावना उसके मनको झकझोर गई है। ऊपर काले-काले मेघ-खंडोंसे आकाश छाया जा रहा है, शायद दुर्योगकी उन्मत्तता जल्दी ही शुरु हो जायगी। विगत रात्रिका आधाएक दु:ख तो उसके सिरके ऊपरसे गुजर गया है, बाकी रात भी मंदिरके बंद द्वारपर खड़े खड़े किसी तरह बीत गई है। इस प्रकार शारीरिक क्लेश सहनेका उसे अभ्यास नहीं है। देवीकी भैरवीको तो यह सब भोगना भी नहीं होता तो भी उसे उसका विशेष दु:ख न था। जो घर, जो घर-द्वार वह अपनी इच्छासे अपने अभागे पिताको दान कर आई है, उसके सबधमें आज दिन-भर उसने कोई चिन्ता ही नहीं की। किन्तु इस समय एकाएक उसका सारा मन जैसे एकदम व्याकुल हो गया। इस निर्जन गाँवके छोरपर अकेले इस टूटे-फूटे सीलनसे भरे घरके भीतर किस तरह उसकी रात कटेगी? अपने आसपास निहार कर देखा। धीमे दीपकके प्रकाशमें घरके उधरके दोनों कोने धुँधले हो रहे हैं, और उन्हींमें बीच बीच चूहोंके बिल जैसे कालीकाली आँखें खोले ताक रहे हैं। उन्हें भरकर बंद करना होगा। सिरके ऊपर छप्परमें असख्य छेद हैं। क्षणभर बाद पानी बरसना शुरू होनेपर हजार धाराओंसे पानी पड़ेगा, खड़े रहनेको भी कहीं जगह नहीं रहेगी। मजदूर बुलाकर इस सबकी मरम्मत करानी होगी। किवाड़ोंको बन्द करनेका खटका निहायत पुराना और जीर्ण है, उसे ठीक करानेकी जरूरत सबसे पहले है। दिन रहते इधर ध्यान नहीं दिया, यह सोचकर उसका कलेजा शंकासे धड़क उठा। इस अरक्षित और परित्यक्त पर्णकुटीमें—केवल आज भर ही नहीं—बहुत दिन वह कैसे रहेगी? उसे याद आया, अभी विदाके समय निर्मलने जो कहा था, उसके उत्तरमें उसकी ओरसे कुछ भी नहीं कहा गया, अथ च अब शायद जल्दी मुलाकात नहीं होगी। वह भरोसा देकर अपनेको एकदम निरुपाय न सोचनेके लिए कह गया है। शायद हजारों कामोंके बीच अपनी यह बात उसे याद ही नहीं रहेगी। याद रही भी तो पश्चिमके किसी बहुत दूर शहरमें बैठकर वह उसकी

सहायता करेगा भी कैसे और उसे मैं ग्रहण ही किस अधिकारसे करूँगी ? फिर हैमकी याद आई। जानेके समय उसने एक बात भी नहीं कही, किन्तु स्वामीके बुलानेपर जब उसका हाथ पकड़कर वह आगे बढी तब स्वामीकी मानो हरएक बातका चुपचाप अनुमोदन कर गई। अतएव स्वामी भूल तो भूले भी सकता है किन्तु स्त्री उस बातको—जिसे उसने उच्चारण नहीं किया—सहजमें नहीं भूलेगी, यह षोड़शीने मन-ही-मन विश्वास किया।

हैमके साथ उसका परिचय बहुत दिनोका नहीं है और घनिष्ठ भी नहीं है। फिर भी किसी तरह दर्वाजा बंद करके वह जब अपना कंबलका बिछौना फैलाकर जमीन पर बैठी, तब हैम उसे बार-बार याद आने लगी। वह जो उसने पहले दिन ही अयाचित रूपसे उसके दुःखमें हिस्सा लेकर गाँवकी समस्त विरोधी शक्तिके विरुद्ध पिताके विरुद्ध, जान पड़ता है और भी एक आदमीके विरुद्ध गोपन युद्ध किया था, उसके चले जानेपर कल उसके पास उसका पक्ष लेकर खड़ा होनेको यहाँ और कोई नहीं रहेगा। प्रतिकूलता उत्तरोत्तर बढती ही चली जायगी, किन्तु अपना कहनेको, एक सान्त्वनाका वाक्य मुँहसे निकालनेको कोई आदमी नहीं मिलेगा। और यह तूफान कहाँ जाकर किस तरह निवृत्त होगा, इसका भी कोई ठिकाना नहीं है। इसी तरह इस बान्धवहीन जनहीन घरमें चारों ओरके घने अधकारमें अकेली बैठकर वह निकट-भविष्यकी सुनिश्चित विपत्तिके चित्रको रत्ती-रत्ती करके देख रही थी, किन्तु इसी बीचमें कब अनजानमें ही इस परिपूर्ण उपद्रवकी आशंकाको हटाकर क्षणभरके लिए एक अपरिज्ञात भावकी लहर उसके विक्षुब्ध चित्तके भीतर बहुत ऊंची हो उठी, वह जान भी नहीं पाई। इतने दिन तक उसने जीवनको जिस तरहसे पाया है, उसी तरहसे ग्रहण किया है। वह चण्डीदेवीकी भरवी है—इसकी एक जिम्मेदारी है, अधिकार है, सम्पत्ति है, विपत्ति है—स्मरणातीत कालसे इस पदकी अधिकारिणियोंके पैर पड़ते-पड़ते जो मार्ग बन गया है, वह कहीं तंग है, कहीं चौड़ा है, वह राह चलनेमें कोई सीधी चली गई है और किसीके टेढे पदचिह्न परम्परासे चले आ रहे इतिहासके अंक (गोद) में विद्यमान है। इस इतिहासके बिना लिखे हुए पन्ने लोगोंकी जबानपर कहीं तो सदाचारकी पुण्य पवित्र कहानीसे चमक रहे हैं और कहीं व्यभिचारकी ग्लानिसे काले हो रहे हैं।

अकेले उस अधकारमें भी वह लज्जासे सिकुड़ गई। “चंडी! चडी!” कहकर उसने सामनेके मंदिरके उद्देश्यसे चौखटपर सिर रखकर प्रणाम किया और सारी चिन्ताको वलपूर्वक मनसे दूर करके दर्वाजा छोड़कर जैसे भीतर आकर खड़ी हुई, वैसे ही और दो नर-नारियोंकी चिन्तासे उसका हृदय परिपूर्ण हो उठा। क्षणभर पहलेकी सारी वातचीतके भीतर भी ऑधी-पानीके शीघ्र आनेकी सभावना उसके मनको झकझोर गई है। ऊपर काले-काले मेघ-खडोंसे आकाश छाया जा रहा है, शायद दुर्योगकी उन्मत्तता जल्दी ही शुरु हो जायगी। विगत रात्रिका आधाएक दु ख तो उसके सिरके ऊपरसे गुजर गया है, वाकी रात भी मंदिरके वंद द्वारपर खड़े खड़े किसी तरह वीत गई है। इस प्रकार शारीरिक क्लेश सहनेका उसे अभ्यास नहीं है। देवीकी भैरवीको तो यह सव भोगना भी नही होता तो भी उसे उसका विशेप दु ख न था। जो घर, जो घर-द्वार वह अपनी इच्छासे अपने अभागे पिताको दान कर आई है, उसके सवधमें आज दिन-भर उसने कोई चिन्ता ही नहीं की। किन्तु इस समय एकाएक उसका सारा मन जैसे एकदम व्याकुल हो गया। इस निर्जन गॉवके छोरपर अकेले इस टूटे-फूटे सीलनसे भरे घरके भीतर किस तरह उसकी रात कटेगी? अपने आसपास निहार कर देखा। धीमे दीपकके प्रकाशमें घरके उधरके दोनों कोने धुँधले हो रहे हैं, और उन्हींमें वीच वीच चूहोंके विल जैसे कालीकाली ऑखें खोले ताक रहे है। उन्हें भरकर वद करना होगा। सिरके ऊपर छप्परमें असंख्य छेद हैं। क्षणभर वाद पानी वरसना शुरू होनेपर हजार धाराओंसे पानी पड़ेगा, खड़े रहनेको भी कहीं जगह नहीं रहेगी। मजदूर वुलाकर इस सवकी मरम्मत करानी होगी। किवाड़ोंको वन्द करनेका खटका निहायत पुराना और जीर्ण है, उसे ठीक करानेकी जरूरत सवसे पहले है। दिन रहते इधर ध्यान नहीं दिया, यह सोचकर उसका कलेजा शकासे धड़क उठा। उस अरक्षित और परित्यक्त पर्णकुटीमें—केवल आज भर ही नहीं—वहुत दिन वह कैसे रहेगी? उसे याद आया, अभी विदाके समय निर्मलने जो कहा था, उसके उत्तरमें उसकी ओरसे कुछ भी नहीं कहा गया, अथ च अव शायद जल्दी मुलाकात नहीं होगी। वह भरोसा देकर अपनेको एकदम निरुपाय न सोचनेके लिए कह गया है। शायद हजारों कामोंके वीच अपनी यह वात उसे याद ही नहीं रहेगी। याद रही भी तो पश्चिमके किसी वहुत दूर शहरमें वैठकर वह उसकी

सहायता करेगा भी कैसे और उसे मैं ग्रहण ही किस अधिकारसे करूँगी ? फिर हैमकी याद आई। जानेके समय उसने एक बात भी नहीं कही, किन्तु स्वामीके बुलानेपर जब उसका हाथ पकड़कर वह आगे बढ़ी तब स्वामीकी मानो हरएक बातका चुपचाप अनुमोदन कर गई। अतएव स्वामी भूल तो भूले भी सकता है किन्तु स्त्री उस बातको—जिसे उसने उच्चारण नहीं किया—सहजमें नहीं भूलेगी, यह षोड़शीने मन-ही-मन विश्वास किया।

हैमके साथ उसका परिचय बहुत दिनोंका नहीं है और घनिष्ठ भी नहीं है। फिर भी किसी तरह दर्वाजा बंद करके वह जब अपना कंबलका बिछौना फैलाकर जमीन पर बैठी, तब हैम उसे बार-बार याद आने लगी। वह जो उसने पहले दिन ही अयाचित रूपसे उसके दुःखमें हिस्सा लेकर गाँवकी समस्त विरोधी शक्तिके विरुद्ध पिताके विरुद्ध, जान पड़ता है और भी एक आदमीके विरुद्ध गोपन युद्ध किया था, उसके चले जानेपर कल उसके पास उसका पक्ष लेकर खड़ा होनेको यहाँ और कोई नहीं रहेगा। प्रतिकूलता उत्तरोत्तर बढ़ती ही चली जायगी; किन्तु अपना कहनेको, एक सान्त्वनाका वाक्य मुँहसे निकालनेको कोई आदमी नहीं मिलेगा। और यह तूफान कहाँ जाकर किस तरह निवृत्त होगा, इसका भी कोई ठिकाना नहीं है। इसी तरह इस बान्धवहीन जनहीन घरमें चारों ओरके घने अंधकारमें अकेली बैठकर वह निकट-भविष्यकी सुनिश्चित विपत्तिके चित्रको रत्ती-रत्ती करके देख रही थी, किन्तु इसी बीचमें कब अनजानमें ही इस परिपूर्ण उपद्रवकी आशंकाको हटाकर क्षणभरके लिए एक अपरिज्ञात भावकी लहर उसके विक्षुब्ध चित्तके भीतर बहुत ऊँची हो उठी, वह जान भी नहीं पाई। इतने दिन तक उसने जीवनको जिस तरहसे पाया है, उसी तरहसे ग्रहण किया है। वह चण्डीदेवीकी भैरवी है—इसकी एक जिम्मेदारी है, अधिकार है, सम्पत्ति है, विपत्ति है—स्मरणातीत कालसे इस पदकी अधिकारिणियोंके पैर पड़ते-पड़ते जो मार्ग बन गया है, वह कहीं तंग है, कहीं चौड़ा है, वह राह चलनेमें कोई सीधी चली गई है और किसीके टेढ़े पदचिह्न परम्परासे चले आ रहे इतिहासके अंक (गोद) में विद्यमान हैं। इस इतिहासके बिना लिखे हुए पन्ने लोगोंकी जबानपर कहीं तो सदाचारकी पुण्य पवित्र कहानीसे चमक रहे हैं और कहीं व्यभिचारकी ग्लानिसे काले हो रहे हैं।

तथापि भैरवीके जीवनकी सुनिर्दिष्ट धारा कहीं भी थोड़ी-सी भी लुप्त नहीं हुई। यात्रा करके अनेक भैरवियोंको ही सहज और दुर्गम, दुर्ज्ञेय और जटिल अनेक गली-कूचे पार करने पड़े हैं, उनका सुख और दुःख-भोग कम नहीं है। किन्तु क्यों, काहेके लिए, यह प्रश्न भी शायद किसी भैरवीने कभी नहीं किया, अथवा इसको अस्वीकार करके और कोई एक राह खोजनेकी भी किसीकी प्रवृत्ति नहीं हुई। भाग्यद्वारा निर्दिष्ट उसी परिचित गलियारेके भीतर होकर ही षोड़शीके जीवनके ये बीस वर्ष बहते चले गये हैं। इसे भैरवीका जीवन मानकर ही बिना किसी संशयके उसने ग्रहण किया है। एक दिनके लिए भी अपने जीवनके बारेमें यह नहीं सोचा कि वह नारीका जीवन है। चण्डीदेवीकी सेवायतके रूपमें वह पास और दूरके बहुतसे गाँवों और बस्तियोंके असख्य नर-नारियोंके साथ सुपरिचित है। कितनी ही रमणियाँ, जिनकी गिनती नहीं हो सकती—कोई छोटी, कोई बड़ी, कोई हमजोलीकी—उनके कितने ही प्रकारके सुख-दुःख, कितनी ही प्रकारकी आशा और भरोसा, कितनी ही व्यर्थताओं, कितने ही बहुत सुन्दर आकाश-कुसुमोंकी वह निर्वाक् निर्विकार साक्षी है। ये स्त्रियाँ देवीका अनुग्रह प्राप्त करनेके लिये कितने ही समयसे कितनी ही मनकी बातें गुप्तरूपसे चुपकेसे उसके आगे प्रकट करती आई हैं, अपने दुखी जीवनके अत्यन्त गुप्त अध्यायोंको निष्कपट भावसे उसकी आँखोंके आगे खोलकर रखकर उन्होंने प्रसादकी—कृपाकी भीख माँगी है। यह सभी उसने देख पाया है, केवल यहीं नहीं देख पाया कि स्त्री-हृदयकी किस भीतरी तहको फोड़कर इन सब करुण अभावों और अभियोगोंके स्वर निकलकर इतने दिनोंतक उसके कानोंमें प्रवेश करते रहे हैं। इनकी गठन और प्रवृत्ति ऐसे किसी एक विभिन्न जगत्की वस्तु है, जिसे जानने और पहचाननेका कोई कारण, कोई प्रयोजन उसको नहीं हुआ। उस प्रयोजनका पहला धक्का आज यहाँ इस परित्यक्त अँधेरे घरमें यही पहले पहल उसके मनमें लगा। कल उस दुर्योगकी रातमें निर्मलका हाथ पकड़कर नदी पार कराके उसने उसे घर पहुँचा दिया था, शायद दो आदमियोंके अलावा और कोई इस बातको नहीं जानता। और आज अभी उसी स्वल्पदृष्टि आदमीके बुलानेपर हैम जो उसीका हाथ पकड़कर चुपचाप अग्रसर हो गई, इस बातको भी शायद इन कई आदमियोंके सिवा और कोई नहीं जानेगा। लेकिन कल और आजके इस कर्त्तव्यमें कितना बड़ा अन्तर है!

और एक वार उसकी आँखोंके सामने हैमकी धोतीकी पाढ और उँगलीकी पन्नेकी अँगूठीसे लेकर उसके कानोंके हीरोंके बुंदे तक सब नाच गये और सब प्रकारके दुर्भेद्य आवरण और अधकारको लाँघकर उसकी अभ्रान्त अतीन्द्रिय दृष्टि दृष्टिके वाहर उस स्त्रीके प्रत्येक पदक्षेपका जैसे पीछा करती हुई चली। उसने देखा अब उसे स्वामीका हाथ छोड़कर, छिपकर घरके भीतर घुसना होगा, वहाँ अपने चिन्तित और व्याकुल पिता-माताके सैकड़ों-हजारों तिरस्कार और कैफियत तलब करना चुपचाप शिरोधार्य करके लजाते हुए जल्दीसे भागकर अपने कमरेमें जाकर आश्रय लेना होगा, वहाँ शायद सोया हुआ बालक जागकर बिछौनेपर बैठा रो रहा है—उसे शान्त करके फिर सुलाना होगा। किन्तु इतनेसे क्या छुट्टी मिल जायगी ? तब भी कितना ही काम बाकी रह जायगा। आड़में रहकर स्वामीके खाने-पीनेकी देखरेख करनी होगी, कोई त्रुटि न हो। लड़केको उठाकर दूध पिलाना होगा—वह भूखा न रह जाय। वादको आप भी खा-पीकर जैसे-तैसे वाकी रात काटकर फिर तड़के उठकर यात्राके लिए तैयार होना चाहिए। उसकी कितनी ही तरहकी जरूरतें हैं, कितनी ही चीजें रखना और बाँधना-बूँधना है। उसका स्वामी, उसका बेटा, उसके नौकर-चाकर आदि उसका सहारा लेकर ही यात्रा करेंगे। राह लम्बी है, उसमें किसे क्या चाहिए, सो सब उसीको जुटाना या देना होगा—उसीको सब सोच-साचकर साथ ले चलना होगा। षोड़शीने किसी दिन कभी अपने जीवनको दूसरेके साथ मिलाकर नहीं देखा, आलोचना करनेकी वात भी कभी मनमें नहीं आई, तो भी उसी मनके भीतर गृहिणी होनेकी सब जिम्मेदारी, सब भाव, माताके सब कर्त्तव्य और सब चिन्ताओंको कोई जैसे जाने कब सुनिपुण हाथोंसे पूरी तरहसे अच्छी तरह सजाकर रख गया है। इसीसे कुछ न जानकर भी वह सब जानती है, कभी कुछ न सीखकर भी हैमके सब काम उसीकी तरह विना किसी कसरके वह कर सकती है—यही उसे जान पड़ा।

थोड़ी ही दूरपर एक लकड़ीके टुकड़े पर रक्खा हुआ मिट्टीका दिया बुझने-बुझनेको हो रहा था। अनमने भावसे उसकी वत्ती उसकाकर रोशनी तेज करते ही वह जैसे चौंक पड़ी—उसे खयाल आ गया कि वह चंडीगढकी भैरवी है। इतनी

बड़ी सम्मानित और प्रतिष्ठित नारी इस प्रदेशमें और कोई नहीं है। यह सोचकर वह लज्जासे जैसे मर गई कि उसने एक साधारण स्त्रीकी अत्यन्त साधारण गृहस्थीकी अत्यन्त तुच्छ आलोचनामें क्षणभरके लिए भी अपनेको विह्वल कर लिया। घरमें और कोई नहीं है। उसकी क्षणभरकी इतनी थोड़ी दुर्बलताको जगत्में कोई कभी जानेगा भी नहीं। केवल जिन देवीकी वह सेविका है, उन चण्डीके लिए और एक वार हाथ जोड़कर सिर झुकाकर उसने कहा—माता, व्यर्थ चिन्तामें समय नष्ट हो गया, तुम मुझे क्षमा करो।

रात कितनी हुई, ठीक जाननेका उपाय नहीं, किन्तु उसने अनुमान किया कि अधिक हो गई है। इसीसे बिछौनेको और भी थोड़ा फैलाकर और दीपकमे और भी थोड़ा तेल डालकर वह लेट गई। थकी हुई आँखोंमें नींद आनेमें भी शायद देर न होती, किन्तु वाहर दर्वाजेके पास ही कुछ शब्द सुनकर वह चौंककर उठ वैठी। हवाने भी कुछ जोर पकड़ा था, किसी सियार या कुत्तेका होना भी असभव नहीं, तो भी क्षणभर कान लगाये रहकर डरते हुए पूछा—कौन है?

वाहरसे जवाव आया—डर नहीं है माजी, तुम सोओ। मै हूँ सागर।

पोड़शीने कहा—लेकिन इतनी रातको तू क्यों आया रे?

सागरने कहा—हर काकाने कह दिया कि जमींदार आया है, रात भी कुछ अच्छी नहीं है। जा सागर, लाठी हाथमें लेकर जरा जाकर वैठ। तुम सो जाओ मा, भोर हुए विना मै नहीं हिलूँगा।

पोड़शीने विस्मित होकर कहा—यही अगर हो सागर, तो अकेला तू क्या कर लेगा भैया?

वाहरके आदमीने जरा हँसकर कहा—अकेला क्यों हूँ मा, काकाको एक आवाज दे लूँगा। काका और भतीजा, दोनों लाठी लेकर खड़े हो जायँ, तो मा, जानती तो हो सव, उस दिनकी लाजसे ही हम मरे हुए हैं। अगर एक वार हुकुम भेज देतीं मा!

ये दोनों चचा-भतीजे हरिहर और सागर डकैतीके अभियोगमें एक वार लगभग दो सालकी जेल काट आये थे। जेलखानेमें वल्कि ये अच्छे थे, लेकिन छूटकर आनेपर इनके प्रति वहुत दिनों तक एक तरफ जमींदारके और दूसरी तरफ पुलिस-कर्मचारियोंके अत्याचारकी कोई हद नहीं थी। कहीं कुछ हो

जाना, तो दोनों तरफकी खींच-तानमें इन प्राणोंपर आ बनती। स्त्री और बाल-बच्चोंको लेकर ये न निर्विघ्न रह सकते थे और न देश छोड़कर और कहीं जा पाते थे। इस अन्याय्य उत्पीड़न और अकारण यंत्रणासे षोडशीने इनको थोड़ा-बहुत उबार लिया था। बीजगाँवकी जमींदारीसे हटाकर इन्हें अपनी जमीनमें रहनेके लिए जगह दे दी थी और अनेक उपायोंसे पुलिसको प्रसन्न करके इनकी जीवन-यात्राके मामलेको बहुत कुछ सुसह्य कर दिया था। तभीसे डाकू कहकर बदनाम ये दोनों परम भक्त षोड़शीकी सब सम्पत्ति-विपत्ति या सुख-दु:खमें उसके पूरी तौरसे सहायक हैं। केवल नीच जाति और अस्पृश्य होनेके कारण ही सकोचके मारे वे दूर-दूर रहते थे और षोडशीने आप भी कभी किसी दिन उन्हें पास बुलाकर घनिष्ठता बढानेकी चेष्टा नहीं की। वह अनुग्रह केवल देती ही आई है, लौटाकर कभी ग्रहण नहीं किया। जान पड़ता है, इसकी जरूरत भी नहीं हुई। आज इस सुनसान आधी रातमें सशय और सकटके बीच उनके इस आडंबरहीन स्नेह और चुपचाप सेवाकी चेष्टासे षोडशीकी दोनों आँखें आँसुओंसे भर गईं। आँसू पोंछकर पूछा—अच्छा सागर, तुम्हारी जातिके लोगोंमें भी शायद मेरे बारेमें बातचीत होती है—होती है न रे? कौन क्या कहता है?

बाहरसे सागरने तमककर जवाब दिया—हम लोगोंके सामने! दो डॉटोंमें कौन किधर भागे, यह सूझता ही नहीं।

षोडशीने तुरन्त लज्जाके साथ अनुभव किया कि उसके आगे उसका इस तरहका प्रश्न करना ही ठीक नहीं हुआ। अतएव बातको और न बढाकर वह चुप हो रही। आँखोंमें नींद नहीं थी। बाहर जल्दी ही आनेवाले आँधी-पानीको सिरपर लेकर उसीकी खबरदारीमें एक आदमी जागता हुआ बैठा है—यह जान लेनेसे ही सोनेमें सुविधा नहीं हो जाती। इसीसे कुछ देर तक चुप रहनेके बाद फिर उसने यही बात छेड़ी। कहा—अगर पानी आया तो तुम्हें बड़ा कष्ट होगा सागर। यहाँ तो कहीं खड़े होनेके लिए जगह नहीं है।

सागरने कहा—न सही मा। रात वैसी नहीं है, दो-एक पहर पानीमें भीगनेसे हम लोग बीमार नहीं पड़ते।

वास्तवमें इसका कोई प्रतिकार भी नहीं था, इसीसे कुछ देर चुप रहकर षोड़शीने फिर और प्रसग उठाया। बोली—अच्छा, तुम लोगोंने क्या सचमुच

ही यह समझा है कि उस दिन जमींदारके पियादे मुझे घरसे जबर्दस्ती पकड़कर ले गये थे ?

सागरने पश्चात्तापके स्वरमें कहा—क्या करतीं मा, तुम अकेली औरतजात। इस मोहल्लेमें मनुष्य कहने लायक कोई है नहीं । हम दोनों चचा-भतीजे भी उस दिन हाट गये थे और तब तक लौटे नहीं थे। नहीं तो किसकी मजाल थी मा, जो तुम्हारी देहमें हाथ लगाता।

षोडशीने मन-ही-मन समझा, यह आलोचना भी ठीक नहीं हो रही है। बातों ही बातोंमें शायद न जानें क्या सुनना पड़े। लेकिन रुक भी नहीं सकी। बोली—उन लोगोंके कितने आदमी थे, तुम दोनों अगर रहते भी तो क्या उन्हें रोक पाते ?

बाहरसे सागरने मुँहसे एक अस्फुट ध्वनि करके कहा—मनका दुःख और बढाकर क्या होगा मा । हुजूर भी आये हैं, हम लोग सब जानते हैं। मैयाकी कृपासे फिर अगर कभी मौका आया तो उसका जवाब देंगे। तुम यह न समझो मा कि हरकाका बूढा हो गया है, तो मर गया है। उसे जानती थीं मातू भैरवी, उसे जानते हैं शिरोमणि ठाकुर। जमींदारके पायक-पियादे बहुत हैं, यह भी जानता हूँ। गरीब जानकर हमें दुःख-कष्ट भी उन्होंने कम नहीं दिये—वह भी याद है। हम छोटे आदमी अपने लिए कुछ चिन्ता नहीं करते; लेकिन तुम्हारा हुकुम होनेपर हम माता भैरवीकी देहमें हाथ लगानेका बदला दे सकते हैं। गलेमें रस्सी डालकर खींचते हुए लाकर इस हुजूरको ही रातों-रात माताके स्थानमें बलि दे सकते हैं मा, कोई साला न रोक सकेगा !

षोडसी मन-ही-मन सिहर उठी, बोली, कहता क्या है सागर, तुम लोग इतने निष्ठुर, ऐसे भयंकर हो सकते हो ? इतनी सी बातके लिए एक मनुष्यका खून करनेकी तुम्हारी इच्छा होती है ?

सागरने कहा—इतनी-सी बात ! सिर्फ इतनी-सी बातके लिए ही तो आज तुम्हारी यह दशा है ! जमींदार आये हैं, सुनकर काकाके तो बदनमें जैसे आग लग गई है। तुम चिन्ता न करो मा, फिर अगर कुछ हुआ तो यह भी तब सिर्फ इतनेसे ही रुक जायगा।

षोड़शीने कहा—हॉं रे सागर, तूने कभी गुरूजीकी पाठशालामें पढा था ? बाहर बैठा हुआ सागर जैसे लज्जित हो उठा। बोला--तुम्हारे आशीर्वादसे यों ही थोडासा रामायण-महाभारत उलट-पुलट सकता हूँ। लेकिन यह बात क्यों पूछी मा ?

षोड़शीने कहा--तेरी बात सुननेसे जान पड़ता है, तेरा काका नहीं भी समझे, लेकिन तू समझ सकेगा। उस दिन मुझे कोई पकड़कर नहीं ले गया सागर, किसीने मेरी देहमें हाथ नहीं लगाया। केवल क्रोधके मारे मेरा सिर फिर गया था और मैं आप ही चली गई थी।

सागरने कहा--यह हम लोगोंने भी सुना है। लेकिन सारी रात जो घरको नहीं लौट पाई मा; वह भी क्या क्रोध करके ?

षोडशी इस प्रश्नका ठीक उत्तर टालकर बोली—लेकिन जिसके लिए तुम लोग इतने खफा हो वह अपनी दशा तो मैंने आप ही की है। मैंने तो अपनी इच्छासे ही पिताजीके लिए घर छोडकर यहाँ आकर आश्रय लिया है।

सागरने कहा—लेकिन इतने दिन तो यह आश्रय लेनेकी इच्छा नहीं हुई मा। जरा देर चुप रहनेके बाद अकस्मात् उसका कण्ठ-स्वर जैसे उग्र और उत्तप्त हो उठा। उसने कहा—तारादास ठाकुरके ऊपर भी हम लोगोको क्रोध नहीं है, राय महाशयको भी हम कोई कुछ न कहेंगे, लेकिन जमींदारको हम मौका पानेपर सहजमें नहीं छोड़ेंगे। जानती हो मा, हमारे विपिनके साथ उसने क्या किया है ? वह घरमें नहीं था, तब उसके आदमियोंने उसके घरमें घुसकर—

षोडशीने चटपट उसे रोककर कहा--रहने दे सागर, ये सब खबरें मुझे न सुना।

सागर चुप हो रहा। षोड़शीने आप भी बहुत देरतक और कोई प्रश्न नहीं किया। कुछ देर बाद सागरने फिर जब बात की, तब षोड़शीने उसके कण्ठ-स्वरमें गूढ विस्मयका आभास स्पष्ट अनुभव किया। सागरने कहा—मा, हम तुम्हारी प्रजा हैं, हमारा दुःख-कष्ट तुम न सुनोगी तो कौन सुनेगा ?

षोडशीने कहा—लेकिन सुनकर भी तो इतने बडे जमींदारके खिलाफ प्रतिकार नहीं कर पाऊगी भैया।

सागरने कहा—एक दफा तो किया था। अगर फिर जरूरत हुई तो तुम्हीं कर सकोगी। तुम न कर सकोगी तो हम लोगोंकी रक्षा करनेवाला कोई नहीं है मा!

षोड़शीने कहा—नई भैरवी अगर कोई हो, तो उसीको तुम लोग अपना दु:ख जताना।

सागरने चौंककर कहा—तो तुम हम लोगोंको क्या सचमुच ही छोड़ जाओगी मा? गाँव भरके सभी लोग आपसमें चर्चा करते हैं—सहसा वह रुक गया, किन्तु षोड़शी खुद भी एकाएक इस प्रश्नका उत्तर न दे पाई। कुछ समय चुप रहकर धीरे-धीरे बोली—देख सागर, तुम लोगोंके आगे यह बात उठाते हुए मैं लज्जासे मरी जाती हूँ। किन्तु मेरे सबन्धमें सब तो तूने सुना है। देखती हूँ, गाँवके और दस आदमियोंकी तरह तुम लोगोंने भी विश्वास कर लिया है। इसके बाद भी क्या तुम लोग मुझीको भैरवी करके रखना चाहते हो रे?

बाहरसे सागरने धीरे-धीरे उत्तर दिया—बहुत बातें ही सुनी हैं मा, और और भी दस आदमियोंकी तरह हम लोग भी समझ नहीं पाते मा कि उस रातको तुम क्यों घर नहीं लौटीं, और सवेरे ही क्यों साहबके हाथसे हुजूरको बचाया! लेकिन वह चाहे जो हो मा, हम कई घर छोटी जातिके किसानोंने तुम्हींको मा जाना है। तुम चाहे जहाँ जाओ, हम भी साथ चलेंगे। लेकिन जानेके पहले एक बार मजा चखाकर जाएँगे।

षोड़शीने कहा—लेकिन तुम लोग तो मेरी प्रजा नहीं हो, माता चण्डीकी प्रजा हो। मेरी जैसी माताकी दासी न जाने कितनी हो गई हैं और कितनी होंगी। उसके लिए तुम लोग घर-द्वार छोड़कर जाओगे ही क्यों, और उपद्रव-अशान्ति ही क्यों करोगे? ऐसा भी हो सकता है कि खुद मुझको ही अब यह सब अच्छा नहीं लगता।

सागरने विस्मयके साथ कहा—अच्छा नहीं लगता?

षोड़शीने कहा—इसमें आश्चर्य क्या है सागर? मनुष्यका मन क्या बदलता नहीं?

अपनी प्रत्युत्तरमें केवल एक 'हूँ' कहकर ही उस आदमीने थोड़ी देर चुप

रहकर कहा—लेकिन अब रात ज्यादा बाकी नहीं है मा, आसमानसे बादल भी हट रहे हैं। अब तुम जरा सो रहो।

षोडशीको खुद भी यह सब आलोचना अच्छी नहीं लग रही थी, उससे वह बहुत थक गई थी। सागरकी बातपर फिर कुछ न कहकर आँखें मूँदकर लेट रही। किन्तु उसकी उन आँखोंमे जबतक नीद नहीं आई, तबतक घूम फिरकर केवल उसी आदमीकी बातें मनमें चक्कर काटने लगीं, जो जागता हुआ बाहर बैठा है। उसे वह बचपनसे ही देखती आई है। नीच और अन्त्यज होनेके कारण इतने दिन केवल तुच्छ और छोटे कामोंमें ही वह काम आया है; किसी दिन कोई सम्मानका स्थान उसने नहीं पाया। बातचीत करनेकी कल्पना तो स्वप्नमें भी किसीके भी मनमें नही उठी। किन्तु आज इस दु.खकी रातमे जाने और बिना जाने उसके मुँहसे अनेक बातें ही निकल गई हैं, और उसका भला-बुरा हिसाब करनेका दिन शायद एक दिन आ भी सकता है; लेकिन श्रोताके हिसाबसे वह इस छोटे आदमीको निहायत छोटा किसी तरह भी नहीं सोच सकी।

दूसरे दिन सबेरे आँख खुलनेपर दर्वाजा खोल कर षोड़शीने बाहर आकर देखा, अब प्रात काल नहीं है—बहुत दिन चढ आया है और थोड़ी ही दूरपर बहुतसे लोग मिलकर उसीके बंद दर्वाजेकी ओर ताकते हुए जैसे किसी तमाशेकी राह देखते हुए खड़े हैं। कहीं पर थोड़ासा पर्दा, थोड़ी-सी आबरू नहीं है। सहसा उसे खयाल आया कि तत्क्षण द्वार बंद न कर देनेसे इन लोगोंकी उत्सुक दृष्टिसे शायद वह बचेगी नहीं। यह छोटासा घर चाहे जितना जीर्ण, चाहे जितना टूटा-फूटा हो, आत्मरक्षा करनेको तो इसके सिवा ससारमें शायद और दूसरी जगह नहीं है। और ठीक उसी समय देखा, भीड़को ठेलकर एककौड़ी नन्दी उसके सामने आकर खड़ा है। एककौड़ीने विनयपूर्वक कहा—हुजूर गाँवमे पधारे हैं, शायद आपने सुना है।

जमींदारके गुमाश्ते एककौड़ी नन्दीने इसके पहले किसी दिन कभी उसे 'आप' कहकर सबोधन नहीं किया। उसकी विनय, उसके संभाषणका यह परिवर्तन षोड़शीको जैसे काँटासा चुभा, किन्तु कुछ जवाब देनेके पहले ही एककौड़ीने फिर सम्मानके साथ कहा—हुजूरने आपको याद किया है।

षोड़शीने कहा--कहाँ?

एककौड़ीने कहा—यहीं कचहरीमें। सवेरेसे आते ही प्रजाकी नालिशें सुन रहे हैं। अगर अनुमति दीजिए तो पालकी लानेके लिए आदमी भेज दूँ।

सब लोग मुँह बाये सुन रहे थे। षोड़शीको जान पड़ा, वे जैसे इस बातको भी सुनकर हँसी दबानेकी चेष्टा कर रहे हैं। उसके हृदयके भीतर जैसे आग-सी जल उठी, किन्तु क्षणभरमें ही अपनेको सँभालकर कहा—यह उनका प्रस्ताव है या तुम्हारी समझदारी है एककौड़ी?

एककौड़ीने सम्मानपूर्वक कहा—जी, मैं तो चाकर हूँ। यह खुद हुजूरका आदेश है।

षोड़शीने हँसकर कहा—तुम्हारे हुजूरकी तकदीर अच्छी है। जेलमें कोल्हू खींचनेके बदले पालकीपर चढ़े घूम रहे हैं, वह भी सिर्फ आप ही नहीं, दूसरेके लिए भी व्यवस्था की है। लेकिन जाकर उनसे कहो एककौड़ी, मुझे पालकीमें चढ़नेकी फुर्सत नहीं है—मुझे बहुत काम हैं।

एककौड़ीने कहा—उस वक्त या कल सवेरे भी क्या थोड़ी-सी फुर्सत न पाइएगा?

षोड़शीने कहा—नहीं।

एककौड़ीने कहा—लेकिन पातीं तो अच्छा होता। अनेक प्रजाओंकी नालिश है न?

षोड़शीने कठोर स्वरमें उत्तर दिया—विचार करनेके लायक विद्या-बुद्धि हो तो वे अपनी प्रजाका विचार करें। मैं तुम्हारे हुजूरकी प्रजा नहीं हूँ, मेरा विचार करनेके लिए सरकारकी अदालत है। यह कहकर वह गमछा कंधेपर डालकर पोखरकी तरफ तेजीसे चली गई।

१३

जमींदारका एकान्त-निवास सजाने और ठीक करनेमें चारेक दिन लग गये। अफवाह यह है कि अबकी हुजूर लगातार दो महीने चण्डीगढ़में विश्राम करेंगे। आज सवेरेसे ही उत्तरकी तरफके बड़े हालमें मजलिस बैठी थी। सारे हालके फर्शपर कार्पेट और उसके ऊपर सफेद जाजिम बिछी है और बीचबीचमें दो-चार मोटे गाव तकिये यहाँ वहाँ पड़े हुए हैं। एक ओर गाँवके प्रतिष्ठित मातबर लोग सभा जमाये बैठे थे। जमींदारके पास उनकी बहुत बड़ी नालिश थी। राय महाशय